ज्ञानपीठ लोकोदय ग्रन्थमाला ग्रन्थांक – २०६

सम्पादक एवं नियामक :

लक्ष्मीचन्द्र जैन

SIKANDARNAMA
(Humorous Novelette)
SALMA SIDDIKI
Bharatiya Jnanpith
Publication
First Edition 1965
Price Rs 2 00

प्रकाशक
भारतीय ज्ञानपीठ
प्रधान कार्यालय
९ अलीपुर पार्क प्लेस, कलकत्ता २७
प्रकाशन कार्यालय
दुर्गाकुण्ड रोड, वाराणसी ५
विक्रय केन्द्र
३६२०।२१ नेताजी सुभाष मार्ग, दिल्ली ६
प्रथम संस्करण १९६५
मूल्य दो रुपये

सन्मति मुद्रणालय, वाराणसी–५

सिकन्दरनामा

(उपन्यास)

सिकन्दर और सिकन्दर

सिकन्दर नामके एक बहुत मशहूर आदमीका जिक्र हम इतिहासमें पढ़ते आये हैं। उसने दुनियाको जीतनेका मन्सूबा बनाया था और उस-पर अमल भी किया था। लेकिन विधाताने उसका यह सपना पूरा न होने दिया और इससे पहले कि वह दुनियाको जीत सकता मौतने उस-पर विजय पा ली। उसकी जिन्दगी और मौतकी छोटी-सी मुद्दतका बयान खासा दिलचस्प है। लेकिन मैं आज जिस सिकन्दरका जिक्र कर रही हूँ उसने दुनियाको जीतनेका स्वप्न तो दर-किनार कभी दुनियाको समझनेका भी ख्याल न किया। फिर भी उसकी मामूली जिन्दगीकी दास्तान किसी तरह उस सिकन्दरकी जिन्दगीकी कहानीसे कम दिलचस्प नहीं है जिसने दुनियापर हुकूमत करनेकी ठानी थी।

हमारे हीरो सिकन्दरका जन्म उत्तर प्रदेशके एक जिले बदायूँमें हुआ,

जहाँके पेडे किमी जमानेमे वहुत मशहूर थे। लेकिन अब मिकन्दरकी शोहरतके आगे पेडोकी शोहरत मन्द पड चुकी है। मिकन्दरका पूरा-पूरा हाल जाननेके बाद हमे यह भी अन्दाजा होगा कि बदायूँके मशहूर पेडाकी शोहरतको ही नही वल्कि दुनियाके वडेमे वडे अहमककी शोहरतको भी सिकन्दरने ठेस पहुँचायी है। वल्कि कभी-कभी तो ऐमा फेर आ पडता है कि माने हुए ऐतिहासिक बेवकूफकी शोहरतको केवल टेस ही नही, गोली लग जाती है और मशहूरतरीन बेवकूफ भी मिकन्दरकी 'अक्लमन्दी' के सामने बेवस और हक्का-बक्का नजर आता है। यूँ भी बेवकूफी और हक्का-बक्कापनका चोली-दामनका माथ होता है। लेकिन सिकन्दर और बेवकूफीका रिश्ता चोली-दामनके रिश्तेसे बहुत आगे बढ चुका है। चोली और दामन कपडेके टुकडे होते हैं और उन्हें आसानीमे नापा जा सकता है — लेकिन चूँकि बेवकूफीको नापनेवाला आज तक कोई फीता दरियाफ्त नही हो सका है, इसलिए सिकन्दरकी हिमाकतोको हम भी आमानीमे नाप-तोल नही सकते है।

सिकन्दर वह प्राणी है जिनपर पैदा करनेवालोको उतना फख्र नही होगा जितनी हैरत होगी। लुत्फ यह है कि सिकन्दर खुद अपने बे-जोड गुणोंसे बिलकुल नावाक़िफ है और हरदम बेहद अक्लमन्द जाहिर होनेकी कोशिश करते रहते हैं। सिकन्दरको एक नजरमें देखकर किसीको यकीन ही नही आ सकता कि इस मामूली-से आदमीके जिस्मर्में हिमाकतोंके कैसे-कैसे कल-पुर्जे छुपे हुए हैं, जो वक्त आनेपर कैमे-कैसे गुल खिलाते हैं।

सिकन्दरकी बेवकूफीको समझनेके लिए बडी सूझ-बूझकी जरूरत है। उनकी हिमाकतें सस्ती, घटिया, मामूली या आमानीमे समझमें आ जाने-वाली नही हैं, वह एक उस मुस्तकिल मजमूनकी हैसियत रखते हैं जिस-पर दिल लगाकर रिसर्च की जाये। और कभी-कभी खुद रिसर्च करनेवाला भी सिकन्दरकी हस्तीके आगे हथियार डाल दे, यानी कलम रख दे और अश्-अश् करने लगे।

सिकन्दरकी अवलमन्दीकी दास्तान खुद उनकी उस कोशिशसे शुरू होती है जो वह खुदको हर दम अवलमन्द जतानेके लिए करते रहते हैं। पहली बात तो यह है कि वह खुदको एक फर्द नही एक जमाअत समझते है, और कभी 'मै' नही वल्कि हमेशा 'हम' कहकर बात शुरू करते है। इस 'हम' का ज़िक्र अनगिनत वार इस तरह करते है कि हमें शुवहा होने लगता है कि इस दुनियामें सिकन्दर ही सब कुछ है और 'हम' कुछ भी नही है।

लगभग तेईस-चौबीस साल हुए एक दिन सुवह सिकन्दर हमारे घरमें नौकरीके इरादेसे दाखिल हुए थे और आज हालत यहाँतक पहुँच चुकी है कि खुद हम लोग यानी घरवाले भी सिकन्दरकी इजाजतके वगैर घरमें दाखिल होनेका हक खो बैठे है।

सिकन्दर वादशाहका तो दुनियापर राज करनेका सपना पूरा न हुआ लेकिन एक गुमनाम-सा वेवकूफ सिकन्दर आज एक पूरे घरानेपर हुकूमत कर रहा है। इसलिए कि उसने सपना नही देखा था, मन्सूवे नही वनाये थे, वस्तिया नही उजाडी थीं, कब्रें नही वनायी थीं, वल्कि महज़ अपनी वेवकूफीके वल्वूतेपर दुनियाके वाजारमें अपनी हिमाकतें सजायी थी और इसीलिए विश्व-विजेता सिकन्दर असफल और अहमक सिकन्दर सफल हो गया।

इस चौबीस सालकी मुद्दतमें शायद ही कोई ऐसा रूखा-फीका दिन गुजरा हो जब सिकन्दरसे कोई-न-कोई हिमाकत वडे पैमानेपर न हुई हो। सिकन्दर और वेवकूफी इस तरह गड्डमगड्ड हो चुके है कि दोनोको जानने-पहचाननेवालोंका भी कभी-कभी इस मुश्किलका सामना करना पडता है कि सिकन्दर कहाँ है और वेवकूफी कौन है? यानी कला कौन है और कलाकार क्या है? वडे आर्टकी पहचान यह वतायी गयी है कि उसमें आर्टिस्टका 'ख़ूने-जिगर' शामिल होता है।

सिकन्दरका आर्ट उस मंजिलपर पहुँच चुका है और कभी-कभी

उनकी अहमकाना हरकतोंसे दिल इस कदर जलता है कि जी चाहता है कि उनके बड़े आर्टमें उनका खूने-जिगर शामिल होनेका इन्तजार न किया जाये, बल्कि सीधे-सीधे बड़े आर्टिस्ट ही का खून कर दिया जाये। इसलिए कि कभी-कभी उनके आर्टकी कीमत बहुत अदा करना पड़ जाती है—यानी उस वक्त जब हालात और मिजाज साजगार न हों और सिकन्दर-का अहमकाना आर्ट अपने शिखरपर हो। और ऐसे मौके अकसर पेश आते रहते हैं।

सिकन्दर जिस दिन हमारे घर नौकर हुए उस दिन उन्होंने अपने आनेके सिलसिलेमें आते ही एक खूबसूरत चायके सेटकी प्याली तोड़ डाली और टूटी हुई किरचें अपने कुर्तेके दामनमें बटोर लाये और सामने खड़े होकर बोले,

"यह देखिए क्या हुआ?"

"क्या हुआ?" हम लोगोंने घबराकर पूछा।

"होता क्या? आपके यहाँके पीनेके नलने यह कर दिया।"

"पानीके नलका इसमें क्या कसूर ?" किसीने कहा।

"और किसका कसूर है, साहब? भला हम क्या करते, हम प्याली धो रहे थे कि नल इससे टकरा गया! नल बदलवा दीजिए "

गुस्सा तो उनपर बहुत आया, लेकिन चूँकि वह उनकी पहली गलती थी, फिर उनके बयानके मुताबिक कसूर उनका नहीं नलका था, इसलिए सब लोग चुप हो गये।

लेकिन उस दिनसे आज तक सिकन्दरकी उस पानीके नलसे दुश्मनी चली आ रही है। कभी प्लेट तोड़ देता है, कभी गिलास चकनाचूर कर देता है, कभी इतना कसकर बन्द हो जाता है कि उसे खोलनेमें सिकन्दर-की उँगलियाँ चटखने लगती हैं, और कभी इस तरह खुल जाता है कि बन्द करनेमें सिकन्दरकी कलाई मुड़ जाती है !

सिकन्दरकी जबान बड़ी कड़वी है। अच्छा-भला आदमी उनके दो

'मीठे बोल' सुन ले तो जिन्दगी-भरके लिए उनका दुश्मन हो जाये। नये नौकरोंके साथ उनका यह सलूक घरवालोंके लिए हमेशा परेशानीका कारण रहा है। इसलिए सिकन्दर अपने-आपको अब नौकर नही बल्कि मालिक-मकान समझने लगे हैं और नौकरको नौकरका भी नौकर समझते हैं। मुश्किल यह आ पडती है कि उनके इस तौर-तरीकेकी बिनापर कोई नया नौकर हफ्ते-दस दिनसे ज्यादा ठहरनेपर तैयार नही होता है।

एक बार सिकन्दरने कोई ऐसी ही हरकत की। एक नौकरको जो बडा सीधा-सादा और नेक-सा छोकरा था, डॉट-फटकारकर घरसे निकाल दिया। वह बडा मेहनती नौकर था। उसके जानेसे काम-काजमे बडी रुकावट पड गयी।

सिकन्दरसे पूछा गया कि "भई, तुमने आखिर उस अच्छे-भले आदमीको क्यो निकाल बाहर किया। तुमसे काम होता नही, दूसरोको टिकने नही देते हो, आखिर हमारे घरका काम कैसे चलेगा?"

सिकन्दरने, जैसी उनकी आदत थी, गरदनको झटका दिया और बोले, "उस छोकरेको बुलाइए और पूछिए, हमने उसे कहा ही क्या था?" फिर सोचकर बोले, "हमने तो उससे बस यह कहा था कि भई, तू हमारी पसन्दका काम नही करता है। हम तुझको बेहद करके ना-पसन्द करते है। फिर तेरी यह मजाल कि तू हमारा मुकाबला करता है। भला कहा तू कहाँ हम! तू जरूर कोई नीच जातका आदमी है। हम ठहरे जात बिरादरीवाले। हमे तो तू कोई कुँजडा कसाई, उठाईगीरा-सा नजर आवे है चल दूर हो हमारी नजरके सामनेसे!"

सिकन्दर अबतक हैरान है! ऐसे प्यारे-प्यारे मीठे बोल सुनकर आखिर वह बेवकूफ छोकरा भाग क्यो गया?

एक बार एक छोटे-से बच्चेके लिए आयाकी तलाश थी। कई आयाएँ

आती और जाती रही। एक औरत ठीक नजर आयी। उसमे तनख्वाह-की बात ठीक नही हो पाती थी। सिकन्दरसे कहा गया कि अलग ले जाकर उस आयासे तनख्वाहकी वातचीत ठीक-ठाक कर लें।

बोले, "क्या कहे हम उससे ?"

कहा गया, "कहना कि तीस रुपये दिये जायेगे। दोनो वक्तका खाना और दोनो वक्तकी चाय मिलेगी। फटे-पुराने कपडे मिलेगे और अगर यह मजूर न हो तो फिर पचास रुपये खुश्क मिलेगे ।"

सिकन्दर सरको झटका देकर आयाको किचनमे ले गये और दो ही तीन मिनिटमें आयाके साथ वापस आये और बोले, "लीजिए साहब, सब ठीक कर दिया हमने " फिर आयाकी तरफ देखकर मुखातिब हुए, "हमने इनसे कह दिया है कि दोनो वक्तकी चाय मिलेगी, दोनो वक्तका खाना मिलेगा, फटे-पुराने कपडे मिलेगे, लेकिन पचास रुपये बिलकुल 'खुश्क' मिलेगे।"

■

सिकन्दरने राखी बंधायी

सिकन्दर आज तक कुंवारे हैं। शादीका अरमान उनकी जिन्दगीका सबसे अहम पहलू है। हर दम, हर घडी, हर वक्त वह अपनी शादीके खयालमें गुम रहते हैं। चौबोस सालसे वह अपनी शादीकी फिक्रमें मशगूल रहते हैं। कोई भी कुँवारी-व्याही, बुढिया-जवान, खूबसूरत-बदसूरत औरत ऐसी नहीं हैं जो हमारे घरमें, पडोसमें, मुहल्लेमें, शहरमें या सिकन्दरके वतनमें उन्हे नजर आयी हो या जिसका महज उन्होंने ज़िक्र सुना हो और उससे शादीके लिए आमादा न हो गये हो। उनकी इस कमज़ोरीसे बहुतोंने फायदा उठाया है, खास तौरपर सिकन्दरके रिश्तेदारोंने उन्हें इस सिलसिलेमें बहुत सताया है और उन्हे लूटा है। हजारों बार उनसे शादीके वादे किये गये – कभी खुद लडकीने, कभी लडकीके बापने, कभी किसी दोस्तने, कभी किसी बिलकुल अजनबी राह-चलते मुसाफिरने – मगर

आज तक किसीने वादा पूरा नही किया ! किसीने शादी नही करायी ! किसीने शादी करनेके लिए दी गयी रकम नही लौटायी ! किसीने एक बार पैसे लेनेके बाद दोबारा सूरत नही दिखायी ! लेकिन सिकन्दरको किसीसे गिला नही है। गिला है तो अपनी किस्मतसे। कहते है, "बेचारे वे लोग क्या करें, जब हमारी किस्मतमे खोट है तो कोई क्या करे "

रिश्तेदार बनकर सिकन्दरको लूटना बहुत आसान है। कोई एक बार उनसे दूरकी या नजदीककी रिश्तेदारी झूठी या सच्ची निकाल दे, सिकन्दरकी बाछें खिल जाती है, बटुआ खुल जाता है। ऐसी नजरोंसे हर तरफ देखते है जैसे कोई बहुत बडा मोर्चा जीत लिया हो। और बस रिश्तेदारकी खातिर बिछ जाते हैं। हममे-से कोई समझाता है कि "भई, ये सब लुटेरे है, तुम्हे लूटनेके लिए आ जाते है " तो सिकन्दर उलटा हम सबसे रूठ जाते है कि, "साहब, हम तो रिश्तेदारोको छोडेगे नही। हम कमाते किसके लिए है ?" इसी रिश्तेदारीके सबबसे सिकन्दर खुद कगाल रहते है। जो कुछ भी जमा-पूँजी उनके पास होती है वह कोई-न-कोई ऐरा-गैरा रिश्तेदारका लेबल लगाकर उनसे झपट ले जाता है। कभी-कभी तो सिकन्दर खुद भी अपने रिश्तेदारको नही पहचान पाते है, लेकिन यह उनकी मुरव्वत और रिश्तेदारीकी भावनाके खिलाफ है कि वह रिश्तेकी छानबीन करें। कहते हैं

"साहब, हमारा खयाल तो यही है कि इस आदमीको हमने कभी अपने खानदानमे नही देखा है न उसका नाम कभी सुना है। लेकिन आखिर उसको क्या पडी है जो ख्वामख्वाह हमे अपना रिश्तेदार कहेगा ? जरूर इसमें कोई भेद है।" मतलब यह होता है कि "जरूर उससे कोई रिश्तेदारी है।"

"और फिर इस 'बे गरज' रिश्तेदारकी जी-जानसे खातिर करते है। उसको दूध-जलेबीका नाश्ता कराते है। अलीगढके बिस्कुट उसको तोहफेमें देते है ! उसको रेलका किराया देते है। रेलपर सवार कराते

है। और बस इस सबके बदलेमें वह चलते वक्त सिर्फ एक फिकरा कह देते हैं, वह जरा हमारा ख्याल रखिएगा लडकी शरीफ हो खिडकी-दरवाजेकी झाँकनेवाली न हो चटोरी न हो "

रिश्तेदार बडे जोर-शोरसे अगले महीनेके पहले हफ्तेमें उनकी शादी करानेकी शर्तिया कसम खाता है। रेल चली जाती है। सिकन्दर वापस चले आते हैं और जाने कितने अगले महीने गुजर जाते हैं। वह रिश्तेदार फिर कभी अपने रिश्तेदारसे मिलने वापस नही आता है। लेकिन सिकन्दर-का ईमान 'रिश्तेकी अहमियत' में और भी मजबूत हो जाता है।

सिकन्दरको शोर-गुल, मेले-ठेले और चहल-पहलसे बहुत दिलचस्पी है। त्योहारोंका इन्तजार बडी बेचैनीसे करते हैं होली, दीवाली, ईद-बकरीद, और बडा दिन — सबका उनको इन्तजार रहता है। सिर्फ इस वजहसे कि इन मौकोंपर वह बाजारकी धूमधाम देख सकेंगे — त्योहारकी अहमियत उनके नजदीक इतनी ही है कि उसमें आदमी अच्छे कपडे पहनते हैं, अच्छा खाना खाते हैं, नाचते-गाते और घूमते-फिरते हैं।

नाच-गानेसे सिकन्दरको हदसे ज्यादा दिलचस्पी है। इसमें बन्दर-भालूके नाचसे लेकर औरत-मर्द और लट्टू तकका नाच शामिल है। जहाँ कहीं किसी नाचने-गानेवालीका पता चलेगा सिकन्दर सब काम-काज छोड वहाँ पहुँच जायेंगे। उनके खयालमें बाजारमें नाचने-गानेवालियोंका बडा ऊँचा दर्जा है। वह किसी कीमतपर किसी नाचने या गानेवालीको घटिया या मामूली माननेपर तैयार नही होते हैं। कोई माने न माने, सिकन्दरको बाजारी औरतोंके साथ गैरमामूली हमदर्दी है। वह उन औरतोंका जिक्र इस कदर इज्जत और अदबके साथ करते हैं जैसे अपने घरानेकी बेहद काबिले-इज्जत और पारसा औरतोंका जिक्र कर रहे हों। कोई लाख समझाये, सिकन्दरकी समझमें किसी तरह नही आता कि इन औरतोंका समाजमें नीच समझा जाता है। वह हैरान होकर आँखें फाड देते हैं और कहते हैं,

"हम कैसे मान लें, साहब, कि चुन्नीबाई, गौरीजान और लच्छमीबाई बुरी औरतें हैं। उनके पास क्या कुछ नहीं है ? फिर यह भी तो देखिए कि 'बेचारी' किस तरह आने-जानेवालोंका दिल बहलाती हैं, खातिर-मदारात करती हैं, गाना सुनाती हैं, नाच दिखाती हैं, पान खिलाती हैं और कितना ख्याल करती हैं।"

मज़ेकी बात यह है कि सिकन्दर इस तरहकी तफरीहगाहोंमें किसी बुरी नीयत या बुरे इरादेसे नहीं बल्कि केवल 'आर्ट बराय आर्ट' की खातिर जाते हैं। उनकी निगाह हर चीज़पर सीधी-सीधी और ऊपरी-ऊपरी पड़ती है। किसी भी चीज़को वह गहराईकी नजरसे नहीं देखते हैं। और चूँकि समाजसे लेकर इन्सान तक दुनियाकी हर चीजकी ऊपरी सतह बेहतर और चिकनी नज़र आती है, इसलिए सिकन्दरको हर चीज बहुत अच्छी और खूबसूरत नज़र आती है। न वह समाजकी दुखती हुई रग छूते हैं न समाजकी ठुकराई हुई औरतका छुपा हुआ ज़ख्म देखते हैं। इसलिए अपने दिलपर भी किसी तरहका बोझ नहीं रखते हैं। शहरकी हर मशहूर और मारूफ तवायफकी चौखटपर वह इस तरह पाबन्दीसे जाते हैं जैसे कोई पवित्र काम पूरा कर रहे हों। वे औरतें भी सिकन्दर-का स्वागत इस तरह करती हैं जैसे अपने किसी बाप, भाई, बेटे या तीमारदारका इन्तज़ार कर रही हों। सिकन्दर उनका गाहक नहीं, उनका एजेण्ट नहीं, उनका पुजारी नहीं, उनका खरीदार नहीं — फिर डर काहेका ?।

और जहाँ बड़े-बड़े दौलतमन्द और रईस जाते हुए हिचकिचाते हैं वहाँ ग़रीब और मुफलिस सिकन्दर धड़ल्लेसे चला जाता है। अमीर लोग तो वहाँ जाते हैं अपना गम हलका करने, अपना गम गलत करने, अपनी जेब हल्की करने। सिकन्दर वहाँ जाते हैं उन औरतोंका दुख सुनने, उनका गम हलका करने।

सिकन्दर उस बाज़ारमें सिर्फ गाना सुनने थोड़े ही जाते हैं। वह तो

उन औरतोंसे घरेलू बाते करते है, अपने रिश्तेदारोंकी बातें करते हैं, अपने दोस्तोंकी बातें करते है, महँगाईकी बाते करते हैं, त्योहारोंकी बातें करते हैं, अपनी सूझ-बूझ-भर राजनीतिकी बातें करते है। गाना तो वे औरतें खुद ही कभी-कभार आदतसे मजबूर होकर सुना देती है तो सिकन्दर सुन लेते हैं। वरना वह तो महज उनके दुःख-सुखकी बातें सुनने गये थे, किसी बुरी नीयतसे थोड़े ही गये थे।

एक बार रक्षाबन्धनके त्योहारके मौकेपर सिकन्दर सुबहसे अपनी आदतके खिलाफ काम-काज बहुत तेजीसे कर रहे थे। घरवाले हैरान थे कि आखिर माजरा क्या है। पूछनेपर उन्होंने बताया, "आपको नहीं मालूम ? आज राखीका त्योहार है। हमे जरा जाना है। हमारी दावत है आज ।"

पूछा गया, "कहाँ जाना है तुम्हे ? कहाँ दावत है ?"

बहुत फख्रसे मुसकराये और बोले, "वह आज जरा लच्छमीबाईके वहाँ जाना है – राखी बँधवाने।"

सिकन्दर एक दिन कमरेकी सफाई कर रहे थे, झाडनसे मेज-कुरसियाँ पोंछते पोंछते उनकी नजर दीवारपर लगे हुए एक कैलेण्डरपर पड गयी। वह एक बड़ा खूबसूरत रंग बिरंग कैलेण्डर था। किसी नदीके किनारे घने-घने पेड़ोंके नीचे पाँच-छह खूबसूरत सजी-सजायी औरतें नाचका पोज दे रही थी। सिकन्दर चुपचाप उस तसवीरकी दिलकशीमें खो गये, फिर मेरी तरफ देखकर बोले, "देखिए डान्स हो रहा है।"

"हाँ" मैंने लापरवाहीसे जवाब दिया।

थोड़ी देर तक कैलेण्डरको गौरसे देखते रहे, फिर बोले, "मेरे ख्यालमे तो ये शरीफजादियाँ है।" फिर अपनी बात समझाते हुए बड़े अदबसे बोले, "तवायफे हैं शायद।"

एक बार सिकन्दर मेरे साथ दिल्ली आ रहे थे। सामान लेकर पहले ही से स्टेशन जा चुके थे। जब मैं स्टेशन पहुँची तो ट्रेन आने ही वाली थी। सबने इधर-उधर सिकन्दरकी तलाशमें नज़रें दौड़ायी। प्लेटफ़ार्मके दूसरे किनारेसे कुलियोंके साथ-साथ जल्दी-जल्दी मेरी तरफ बढ़ने लगे। जब दस-बारह कदमपर रह गये तो अचानक ठिठककर रुक गये और बराबरमें खड़ी हुई एक औरतसे मुखातिब हुए, "अरे बाई, तुम कहाँ?"

मैंने उन महिलाको सरसे पाँव तक देखा। वह अधेड़ उम्रकी एक बड़ी लम्बी-चौड़ी-सी, बेझिझक, झगड़ालू-सी औरत नजर आती थी। मैली-सी पीली धोती पहने थी और एक बीड़ीको अपने पंजेमें दबोचे हुए मुँहसे धुआँ निकाल रही थी।

ट्रेन आ गयी थी, जल्दी-जल्दी सामान वग़ैरह रखा गया और गाड़ी चली तो मैंने जरा सख्त लहजेमें सिकन्दरसे कहा, "यह कौन बेहूदा-सी औरत थी?"

सिकन्दरने हैरानीसे आँखें फाड़कर कहा, "अरे? तोबा कीजिए, बीबीजी वह बेहूदा-सी औरत क्यों होने लगी? वह तो मदारगेट (अलीगढ़का मशहूर तवायफोंका मुहल्ला) की लीलाबाई थी। अभी-अभी छह महीनेकी जेल काटकर आ रही है।"

सिकन्दरके लहजेमें ऐसी इज्जत थी जैसे मदारगेटकी लीलाबाई कोई बड़ी शरीफ, इज्ज़तदार, सोशल वर्कर थी जो देशकी सेवाके सिलसिलेमें जेल काटकर आ रही थी।

■

सिकन्दर फिल्म देखने गये

कभी कभार सिकन्दर फिल्म देखने भी चले जाते है, लेकिन फिल्म देखनेका शौक उनको जरा कम है। जब किसी तसवीरकी बहुत तारीफ सुनते हैं तो जाते है, लेकिन जब फिल्म देखकर आते है तो दो दिन तक उसी फिल्मके माहौल और डायलॉगमे खोये रहते है। पिछले साल इसी तरह कोई फिल्म देख आये और सुबहसे खिलाफ-मामूल चुप-से थे। हाँ, आते-जाते, झाड़ू देते-देते, बरतन धोते-धोते, कभी-कभी हाथ रोककर मुँह-ही-मुँहमे कुछ बुदबुदाते, कभी मुसकराते, कभी अफसोससे सर हिलाते, या तमाम इस तरह हाथको नचाते गोया जो कुछ भी हुआ उसकी जिम्मेदारी उनपर किसी तरह नहीं है और जैसे खुदासे कह रहे हो —

मुझे फिक्रे-जहाँ क्यों हो
जहाँ तेरा है या मेरा ?

जब सिकन्दरपर यह कैफियत तारी हो जाये तो सोच लेना चाहिए कि दौरा शदीद है और जबतक मरीजका पूरा हाल नही पूछा जायेगा इलाज मुमकिन न होगा। जब सिकन्दर चायकी ट्रे लेकर मेरे कमरेमे आये और ट्रे मेजपर रखकर एक तरफ खडे हो गये तो मै समझ गयी कि अब कुछ वक्त उनकी नजर करना ही पडेगा। मैने पूछ ही लिया, "आज कौन-सी फिल्म देखी ?"

सिकन्दर खिल गये। आगे बढकर बडे गम्भीर लहजेमें बोले, "मुगॅ-आजम देख आया हूँ।"

"कैसी लगी तुम्हें फिल्म ?"

"अरे बीबी, क्या बतायें हम, अजीब फिल्म थी। वह जो किसीने कहा है कि किस्मतका लिखा पूरा होता है तो बेचारी अनारकलीका मुकद्दरका लिखा पूरा हुआ ..."

"भई! यह अनारकली कौन थी ?" मैने किस्सेको तूल देते हुए कहा।

अब सिकन्दर मूडमे आ चुके थे, आरामसे नीचे कालीनपर बैठ गये और बोले, "अरे बीबी, आपको अनारकलीके बारेमे कुछ पता नही और लोग-बाग तो कहे हैं, किताबोमे उसका किस्सा लिखा है! ..."

"भई, मैं ज़रा किताब कम ही पढती हूँ। तुम तो बताओ, यह किस्सा क्या है आखिर ?"

किस्सा साफ है, मुगॅ-आज़मके दरबारमे एक बाँदी थी। मुगॅ आजम-देखा-देखी लोग-बाग उसको अनारकली कहने लगे, सारे आलम (साहबे-आलम) के सामने पहुँच गयी और तिनमे (उनसे) एक दिन मुहब्बत करने लगी। मुगॅ-आज़मके डरसे कोई डाकिया तो उसका खत 'सारे आलम' तक पहुँचानेपर राजी न हुआ होगा, तो अनारकली अपना खत लिखकर एक फूलमें बन्द करके दरियामे डालकर बैठ रही, गाने लगी कि "न देखा न भाला, तेरी झूठी कहानी पर हम बहुत रोये!" ...

हुदाका यूँ हुआ कि 'सारे आलम' की नजर पड गयी फूलपर। जिन्होंने (उन्होंने) फूल जो उठाया तो उसमें-से निकला खत। बस फिर क्या था। 'सारे आलम' अपने बाप मुर्गे-आजमके खिलाफ हो गये। उधर मुर्गे-आजम भी ठहरे एक ही जिद्दी आदमी। बस बाप-बेटेकी ठन गयी — बाप आपको चीखे-चिल्लाये, बेटा आपको। उधर अनारकली और उसकी माँने शोर मचा दिया। शोर-गुलसे मुर्गे-आजमको और भी 'जिद' पड गयी और उन्होंने हुक्म दे दिया कि अनारकलीको जिन्दी चुनवा दिया जाये।"

"फिर क्या हुआ?" मैंने जरा हैरत जाहिर की।

"अरे होता क्या, साहब, सारे तमासबीन रोने लगे कि बादशाहोंके चक्करमें बिचारी लौंडियाकी जान मुफ्तमें चली गयी। अच्छी-भली सकल-सूरतवी थी कहाँ दरबारमें जाकर 'सारे आलम' की जानको आ गयी कनीज तो यूँ ही ठहरी। भला पूछो तो सही, तुझे किसने कहा था कि अपनी जात-बिरादरीको छोडकर दरबारमें घुस जाये। अरे अपनी जातमें देखती किसी बराबरवालेको तो सादी-ब्याह भी हो जाता और जान भी बच जाती। मगर वह जो कहा है किसीने 'औरत जात तो वही करे है जो उसका जी चाहे है।'

"फिर?" मैंने पूछा।

"तो फिर क्या, अनारकलीको जिन्दी चुनवा दिया मुर्गे-आजमने।"

सिकन्दर दर-गुजरके अन्दाजमें बोले, "हम तो यही समझते साहब कि अनारकली अब सही-सलामत न आयेगी, वह तो गयी कामसे। पर सावास है मुर्गे-आजमको। दरबारमें मौतका हुकुम दिया और फिर जो हमने देखा तो खडे है सुरागमें और अनारकली अलग खडी है। हम तो जाने जानबख्शी कर दी उसकी — बस इतना जरूर उससे मुर्गे-आजमने कहा, "लडकी, जा हमने तेरी जानबख्शी कर दी। अब तू यहाँसे निकल जा और पहुँच जा सीधी किसी मुगलसराय (महल सरा) को।"

अनारकलीके पूरे किस्सेमे सिकन्दरको यही एतराज था कि उस बेवकूफ छोकरीने सख्त हिमाकत यही की थी कि बादशाहके बेटेसे मुहब्बत कर बैठी। सीधे-सीधे अपनी जात-बिरादरीवालोमे किसी आदमीका हाथ पकड लेती। और इस जात-बिरादरीका जिक्र करते हुए सिकन्दरका लहजा कुछ ऐसा था जैसे वह खुद अनारकलीकी जात-बिरादरीके हो।

दिलीपकुमारकी ऐक्टिगके अब बहुत कायल हो गये है – पहले नही थे। और जबसे मुगले-आजममे उसने अनारकलीसे इश्क किया था, खास उससे नाराज रहने लगे थे। लेकिन एक दिन पिक्चर-हाउससे लौटे तो बहुत ही खुश थे और दिलीपकुमारका जिक्र इस तरह कर रहे थे जैसे अपनी जात-बिरादरीकी औरतसे इश्क करनेका उसका जुर्म उन्होने माफ कर दिया हो। बोले, "साहब! क्या ऐक्टिग किया है दिलीपकुमारने इस फिल्ममे –"

"किस फिल्ममे ?"

"अरे, उसी कोलनूर (कोहनूर) मे। क्या फिलम बना है कि दस बार देखो और जी न भरे। फिर गाने तो ऐसे है कि पैसे वसूल हो गए। एक मशहूर शहेर (शेर) तो ऐसा गाया है कि जो सुनता है वाह-वाह करता है, जगलमे रातके बखत (वक्त) गाता है आजकी रात ... और सितारोका मिलन होगा और मुसकराता रहेगा ... आजकी रात। दूसरे मौखे (मौके) पर गाता है ... ये देखे जादूगरी – सबज परीका उठा लाया गुलफाम ..."

सिकन्दर शायरीके सिलसिलेमे किसी खास काबिल, ... के कायल नही उनके दिलको तो जो अल्फाज अगर भा जाते है उन्हे उलट पुलट कर किसी-न-किसी तरह अपनी जरूरत और मर्जीके मुताबिक तरतीब दे लेते है। और अक्सर तो अपनी किसी ... बेमानी और अहमकाना बातके सबूतमे बतौर मिसाल शेर पेश करते है। मसलन एक दिन बावर्चीखानेमे बैठे दूसरे नौकरोसे कुछ ...

बारेम बाते कर रहे थे। बहुत सोच-विचारकर बोले, 'भाई बात गे (यह) है कि अमीर अमीर है – गरीब गरीब। दोनो कौमे (कौमें) एकदम अलग-अलग हैं। अमीरोका क्या है, सेर तफरीह (सैर-तफरीह) मे वरन (वक्त) गुजार देते है। रहे गरीब तो उनकी भी गुजर हो ही जाती है। वह जो कहा है किसी साहिरने कि 'जब वक्त तनहाई होती है – हम इस तरह गुजारा करते है।' जाने किस भले आदमीके गलेपर छूरी फेरकर वह इतमीनानने हुक्का गुटगुडाते हुए बावर्चीखानेसे निकल गये।

एक दिन गर्मियोकी रातमे गरमी और मच्छरोसे आजिज सिकन्दरको नींद नही आ रही थी। सहनके एक कोनेमें अपनी खाटपर कभी उठ रहे थे कभी बैठ रहे थे। मेरा उधरसे गुजर हुआ और मैंने पूछा, "क्या बात है सिकन्दर, सोते क्यो नही हो ?"

बोले, "क्या बताऊँ बीबी—ये मच्छर सोने ही नही देते। गर्मीसे नीद अलग नही आ रही है। वही मजमून हो गया है वह जो किसी साहिर (शाइर) ने कहा है कि—कजा (कजा) का तो दिन हमने मुकर्रर (मुकर्रर) कर दिया है—फिर तुझे नीद क्यो नही आवे है ?"

कहाबेकी सर्दीके दिनोमे कोई फिलम देखकर आये तो बहुत ही मुतास्सर मालूम होते थे। बोले, "साहब, ये फिलमके ऐक्टर-ऐक्टरानियाँ भी जाने किस मिट्टीके बने हुए है। ये जोरोका जाडा पड रहा है, दांतसे दात बज रहा है, और ऊपर फिलममें मेह पडता जावे है और दोनो गा रहे थे, मजे-मजे से कि–

जिन्दगानी भर न भूलेगी ये बरसात की रात,
कि हो गयी एक हसीना से अचानक मुलाकात।

बात खुदा-न-ख्वास्ता। वह तो कहो खुदाको उनकी जिन्दगानी मजूर थी। और नही तो जो हो जाता अलमोनियाँ (निमोनिया) तो क्या होता ?"

गीता वालीकी कोई फिल्म ऐसी नही जो सिकन्दरने न देखी हो। पूरी हिन्दुस्तानी फिल्म इण्डस्ट्रीमें अगर किसी ऐक्ट्रेसके कायल है तो सिर्फ गीता वालीके। सिकन्दरने गीता वालीको सबसे पहले फिल्म 'सुहाग रात' मे देखा था और उसी वक्तसे उसके गिरवीदा हो गये थे।

मैंने पूछा, "भई, आखिर ऐसी क्या बात गीता वालीमें है जो दूसरी ऐक्ट्रेसोमें नही है ?"

बोले, "आप समझी नही। उनमे (गीता वाली) क्या-क्या खूबियाँ (खूबियाँ) है। अरे साहब ! ऐसी अच्छी आदतकी है वह कि क्या कहे हम। बडी सीधी-सादी तबियत है उनकी। शान और गरूर तो उसमे नामको नही है। हम तो, साहब, बस 'स्वाग-रात' देखते रहे और वाह-वाह करते रहे। भिकारीकी तरह रहती है—बिचारीके पास पहननेको कपडे नही, खानेको रोटी नही, रहनेको घर नही, पर क्या मजाल जो सकायत (शिकायत) का हरफ मुँहपर लायें, बडी गरीबनी तबियतकी है। जैसा सूखा-फीका खानेको दे दिया खुशी-खुशी खा लिया। जो मोटा-झोटा पहननेको दिया पहन लिया। बस साहब, हम तो इस बातके कायल हो गये है। दूसरी ऐक्ट्रसोकी बात अलग है। बड़ी दिमागदार (दिमागदार) होती है वह। क्या हमने देखी नही है उनकी फिल्म। हर बातपर झगडा, हर चीजपर नखरा।"

गर्ज़ कि गीता वालीको एक फिल्ममें सीधी-सादी भिखारिनके रूपमे देखकर सिकन्दरने दिल-ही-दिलमे बडे-बडे हवाई किले बना लिये और हर दम इस फिक्रमे रहते थे कि किसी तरह उस गरीब भिखारिनके पास आ सकें। करना खुदाका यूँ हुआ कि उन्ही दिनो सिकन्दरके दाँतमे दर्द शुरू हो गया और एक दिन जब कि वह किसी डाक्टरकी तलाशमें था किसीने उनको बताया कि गोल मार्केटमे एक डेण्टिस्ट है—डाक्टर वाली। उनसे मिलें और इलाज करायें। सिकन्दर डॉक्टर वालीका नाम सुनकर खिल उठे और उन्होंने दिल-ही-दिलमें तय कर लिया कि डाक्टर वाली

गीता वालीके वालिदे-बुजुर्गवार हैं, और गरीबीसे तंग आकर डॉक्टर बन बैठे हैं। और उनके जरियेसे दांतके दर्दका नहीं तो कमसे कम दिलके दर्दका तो इलाज हो ही सकेगा। चुनांचे सीधे वह डॉक्टर वालीके मतबमें घुस गये।

डॉक्टरने उनसे पूछा, "कहिए, कैसे आना हुआ? दांतमें क्या तकलीफ है आपके?"

सिकन्दरने तसल्ली देते हुए कहा, "इतमीनान रखिए, दांतका इलाज हम आप ही से करायेंगे। लेकिन पहले ये फरमाइए कि वह कहां है?"

डॉक्टर साहब बोले, "वह कौन?"

बोले, "आपकी साबजादी?"

डॉक्टर साहबने गुस्सैली निगाहोंसे देखकर गरजकर पूछा, "होश तो ठिकाने है मिस्टर आपके। मेरी साहबजादीका नाम लिया आपने तो गोली मार दूंगा आपको।"

सिकन्दर बोले, "वाह साहब, वाह। हमने जरा पूछ लिया बिनको तो आप यूं चीखने लगे। और सारे शहरमें लोग-बाग उनके चरचे करते हैं—तो आप सबको गोली मारेंगे?"

डाक्टर इस बातपर चकराये और समझ गये कि खराबी सिकन्दरके दांतमें नहीं दिमागमें है। फिर भी मोटी अकलके आदमी थे, बातकी तह तक पहुंचनेमें देर लग रही थी उनको।

आखिरकार सिकन्दरने खुद ही बात साफ की और पूछ ही बैठे, "तो क्या गीता वाली आपकी साहबजादी नहीं है?"

अब डॉक्टर साहबकी जानमें जान आयी—फिर भी वह सिकन्दरकी जानबख्शीपर रजामन्द नजर न आते थे और सिकन्दरके दांतपर अपनी नजरें लगाये हुए थे। आसपासके लोगोंने सिकन्दर और डॉक्टर

साहबका झगड़ा होते हुए देखा तो सुलह-सफाई कराने लगे और बड़ी मुश्किलोंसे पाँच रुपये और एक दाँतका नजराना लेकर डॉक्टर [illegible] सिकन्दरका पीछा छोड़ा।

उस दिनसे गीता वालीका नाम सुनते ही सिकन्दरके दाँतमें दर्द होने लगता है और इस तरह हमें भी गीता वालीकी गरीब-तबीयत और [illegible]-के किस्से सुननेसे निजात मिल गयी।

■

सिकन्दरका मफलर

सिकन्दरको हमेशा यह शुबहा रहा कि उनकी सेहत खराब रहती है, और इसलिए वह आम तौरसे डॉक्टरोंकी तलाशमें रहते हैं। अलीगढ़में जान पहचानके डाक्टरोंकी वजहसे उन्हें मेडिकल कॉलेजकी तरफसे बड़ा इत्मीनान रहता था। जब वह दिल्ली आये तो अपने पूरे बिस्तरके साथ-साथ अपनी बीमारियोंकी पोटली भी उठाते लाये। दिल्लीमें उनको इलाज-की वह आसानियाँ और सहूलियतें कहाँ मयस्सर जो अलीगढ़में थी। इस कारण सिकन्दर बहुत दुखी रहने लगे थे और एक दिन कहने लगे –

अरे साहब अलीगढ़की भी क्या बात है। इलाज और डाक्टरीका तो वहाँ बड़ा आराम है। एक यह है आपका दिल्ली, यहाँ तो बीमार पड़नेमें भी दिल डरे है। कल रात हमें बदहजमी हो गयी थी। हम तो समझे कि हमको हो गयी 'कालके' (कालरे) की बीमारी। पर वह तो

खुदाको जिन्दगानी मंजूर थी हमारी कि आप-ही-आप हम ठीक हो गये। वर्ना यहाँ तो मर जाते हम जब भी किसी डॉक्टरको फिक्र न होती। फिर भी बडी हैरतसे बोले, "काम खुदा न खास्ता, कोई बीमार पडे तो बस अलीगढमे। लेकिन वह जो किसीने कहा है कि किस्मतके आगे किसीकी न चले है, तो यह तो वैसई (वैसा ही) हो गया है कि मजारो-का नाम शुक्रिया है।"

बीमारियोमे वह सबसे ज्यादा जुकामसे डरते है और उसे बडे शौकसे 'जूखाम' कहते हैं। एक बार सर्दीके दिनोमे उन्हे कोई जरूरी काम लेकर अलीगढसे दिल्ली जानेको कहा गया। सिकन्दरने साफ मना कर दिया कि "साहब, हम नही जायेगे। यह जोरोका जाडा पड रहा है, अगर हम दिल्ली गये तो पानी बदलनेसे हमें जूखामका मर्ज पैदा होनेका अन्देशा पैदा हो जायेगा।"

सर्दीमे बहुत बचते हैं और अक्तूबरसे लेकर मार्च तक एक मफलर अपने सर और कानोके चारो ओर लपेटे रहते हैं। कैसा ही कोई मौका आन पडे, सिकन्दर पाँच माह तक उस मफलरको किसी हालतमे अपने सर और कानोसे अलग करनेपर तैयार नही किये जा सकते। पाँच माह तक यह मफलर बाकायदा सिकन्दरसे चिपककर रह जाता है। उनका खयाल है कि अक्तूबरसे मार्च तककी हवाएँ तो बस चलती ही है सिकन्दर-को सतानेकी खातिर। कभी-कभी हवाओमे भी वह ऐसे अल्फाज कहते सुने गये है जो वह शायद अपने किसी मुखालिफसे कहते।

इस मफलरका भी अजीब हाल है। यह कभी [illegible] उतारा नही जाता और वक्त गुजरनेके बाद उसकी हालत ऐसी नही रह जाती कि उतारकर रखा जा सके। वह तो सिकन्दरपरसे उतरता है तो [illegible] करकटकी बाल्टीमे जाता है। सिकन्दर नई [illegible] को इस तरह अपनेसे अलग करते है जैसे हम-आप [illegible] है या साँप अपनी केंचुल उतार फेंकता है। [illegible]

अन्दाजा महज कैलेण्डरसे नही, कभी-कभी सिकन्दरके मफलरके उतरने-चढ़नेसे भी लगाया जा सकता है।

कुछ तो सिकन्दर सुनते भी ऊँचा है और कुछ उस मफलरकी वजहसे भी सुननेसे माजूर रहते हैं। इस सिलसिलेमें आये-दिन तरह-तरहके लतीफे होते रहते हैं। मसलन उनसे कहा जाता है "भई सिकन्दर, धोबी कितने दिनसे नही आया है?"

जवाब मिलता है, "वाह साहब वाह, गोभी तो अभी परसों ही पकी थी?"

कोई कहता है, "हमारा बिस्तर छतपर लगाना।"

सिकन्दर जवाब देते हैं, "खत तो हम डाल भी आये।"

किसी ने कहा, "बाजार जाओ तो गजक लेते आना।"

सिकन्दरने लापरवाहीसे हुक्का पीते हुए जवाब दिया, "गन्नेका रस आजकल कहाँ मिलेगा।"

एक दिन मैंने उनसे कहा, "रात तुमने मेरी सुराही क्यों नही भरी?"

वह फल्सफियाना अन्दाजमें बोले, "हमने तो आज तक आपकी बुराई नही की।"

सिकन्दरकी साइकिलकी चोरी

अजीब बात यह है कि आम तौरपर सिकन्दर कम ही सुनते हैं और अगर वकील उनके कोई 'रगड़े' (झगड़े) का काम उनके सुपुर्द कर दिया जाये, तब तो बिलकुल ही बहरे पट बन जाते हैं। लेकिन [illegible] बाजार जानेका नाम कोई ले दे सिकन्दर चाहे जमीनकी सातवीं [illegible] सुन लेंगे। और बाजार जानेके लिए तैयार हो जायेंगे। [illegible] जान किसी तोतेमें बसती थी कि नहीं लेकिन [illegible] बाजार-मे बसती है। वह हर वक्त इस फिक्रमें रहते हैं कि [illegible] बाजार-का काम किसी-न-किसी तरह निकाल लें। [illegible] मांग ले उनसे तो लगता है हिमालय [illegible] उनसे कर दी गयी है। लेकिन अगर बाजारका काम [illegible] चाहे घरके किसी भी हिस्सेमें हो [illegible]

और सिर्फ उसी हादसेमे जो 'एसीटेण्ट' बन जाता है, सिकन्दरकी दिलचस्पी हदसे ज्यादा बढ जाती है ।

एक बार बाजारसे लौटे तो बडे परेशान, मारे बदहवासीके होश नही समा रहा था । अपनी साइकिलको बडी बेजारीसे उन्होने एक तरफ दीवारके साथ झटका देकर खडा कर दिया और एक [illegible] बैठकर कराहने लगे । धीरे-धीरे घरवाले उनके चारो तरफ इकट्ठा होने लगे और हाल पूछने लगे । सिकन्दर इस तमाम अरसेमे अपने सीधे हाथकी दो उँगलियोको बडे प्यारसे सहला रहे थे और मुंह ही-मुंहमे कुछ बडबडाते भी जा रहे थे । एक नौकरने आगे बढकर पूछ ही लिया, "आखिर हुआ क्या, कुछ बताओ भी तो ?"

सिकन्दरने गुस्सैली निगाहोसे उसकी तरफ देखा और बोले, "पर हटके खडा हो । मुंह पे क्यो चढा आवे है ? तुझे कुछ नजर न आवे है जो हमसे पूछ रहा है कि क्या हुआ । देखता नही है उँगलियां टेढी हो गयी है ।"

उँगलियोके टेढी होनेकी खबरपर सब लोग चौक गये । आखिर घरकी मालकिनने आगे बढकर और जरा डाँटकर पूछा, "क्या उँगली-उँगली किये जा रहे हो ? अगर चोट ज्यादा लगी है तो हस्पताल जाओ, मरहम-पट्टी कराओ । यहाँ बैठे बैठे क्या कर रहे हो ? [illegible] तरह बताते क्यो नही हो कि आखिर हुआ क्या ?"

सिकन्दरने आँखे ऊपर उठायी, [illegible], [illegible] कर बोले, "होता क्या, बेगम साहब, हम [illegible] बाजारसे लौट रहे थे कि [illegible] आवाज दी [illegible], [illegible] भागे जा रहे हो—दो घडीका [illegible] । बस साहब, [illegible], [illegible] भी क्या है, जरा [illegible] दो बात सुनते चल । [illegible] दुकानके तख्तेपर लगाकर [illegible] लिया और [illegible] गये । अभी दो ही मिन्ट (मिनिट) हुए थे [illegible]

एक गँवार, जाहिल (जाहिल) रिक्शेवालेने अपना रिक्शा हमारी तरफ बढा दिया और बस उस कमबख़्त रिक्शेके अगले पहियेने आगे बढकर हमारे पावपर 'एसीटण्ट' कर दिया ।"

"अरे-रे-रे-रे", किसीने कहा "और सिकन्दर तुमने रिक्शेवालेको यूँ ही छोड दिया ?"

सिकन्दर माफ करने-करनेके अन्दाजमे बोले, "अरे भई, हमने तो आगे बढकर उसको गलेसे पकड लिया था और उसको सीधे ले जा रहे थे थाने कि इतनेमे क्या देखते है कि अपने बरना देवीके थानेके दीवानजी चले आ रहे हैं। हमे जो देखा दीवानजीने तो फौरन आकर उन्होने रूदगाड (रुदाद) पूछा । हमने आगे बढकर रिक्शेवालेका हाथ दीवानजीके हाथमे थमा दिया और कहा, आप इन्साफ कीजिए। इसने इतने ज़ोरसे हमारे पाँवपर 'एसीटण्ट' किया है। इसकी क्या सज़ा मिलनी चाहिए ? दीवानजीने हमारे पाँवको देखा, फिर रिक्शेवालेको देखा और बोले, अरे भई, जाने भी दो। यह बेवकूफ आदमी है, आप अकलमन्द आदमी है, मुन्शीजी। बात बढानेसे क्या फायदा। मुआफ कर दो। फिर मुस्कराकर विन्होने तो खुद ही कह दिया कि आप ठहरें मुन्शीजी, रिक्शेवाला ठहरा ज़ाहिल (जाहिल) आदमी। बस हम सीधे-सीधे साइकिल उठाकर चले आये।"

सिकन्दरकी इस साइकिलका भी अजीब हाल है। पिछले पन्द्रह-सोलह बरस हुए सिकन्दरको यह साइकिल दी गयी थी। उस वक्त इस बेचारीके सब पुर्जे सब ठीक ठाक थे। अब तो उसकी अजीबो-गरीब हालत हो गयी है। साइकिलके अलावा हर दूसरी मशीनका उसपर गुमान होता है। इसके सारे अजर-पजर घिस-घिसाकर एक-दूसरेमे इस तरह चिप्पक हो गये हैं कि अब तो अगर कोई साइकिलको ईजाद करनेवाला भी चाहे तो इसके अलग-अलग पुर्जे नही पहचान सकता है। सिकन्दरके अपने हाथ-पाँवका भी यही हाल है। पावकी वह उँगलियां जिनपर उस बदनसीब रिक्शेने 'एसीटेण्ट' किया था, सदासे ऐसी ही टेढी-मेढी है। चलते वक्त

दोनों टाँगें उस तराजूकी तरह ऊँची-नीची होती रहती हैं जिसके पलड़ोंको अनाड़ी या बेईमान दुकानदार कभी बराबर न रख सकता हो। एक कदम आगे बढ़ता है तो दूसरा जाने किस तरह पीछे जाने लगता है। सिकन्दरको चलते देखकर एक ही वक्तमें दुनियाके आगे बढ़ने और पीछे हटनेका, तरक्की करने और लौट पड़नेका, ख्याल आता है। सिकन्दरके पाँव उस पूरी पीढ़ीकी नुमाइन्दगी करते हैं जो आगे बढ़ना भी चाहती है और पीछेसे हटना भी नहीं चाहती। सिकन्दरकी चालमें एक अजीब-सा सकोच पाया जाता है, जैसे वह चलनेसे पहले फैसला न कर सके हों कि किधर जाना है। शायद यही सकोच सिकन्दरको पैदा करनेवालों-को भी रहा होगा कि उनको भेजे कि न भेजे।

सिकन्दरने अपनी साइकिलको भी अपनी आदतों और अपने हाथ पाँवके साँचेमें ढाल दिया है। उस साइकिलको सिकन्दरके सिवा कोई दूसरा आदमी नहीं चला सकता है। सिकन्दर उस साइकिलपर उतना ही हक जमाते हैं जितना आज माँ-बाप अपनी औलादपर या आज लोग अपनी बीवियोंपर जमाते हैं। यानी सिकन्दर जो मर्जी चाहे साइकिलसे करें, साइकिलको कोई हक नहीं है कि वह उनसे इसके खिलाफ [illegible] करे। [illegible] सिकन्दर और उनकी साइकिल [illegible] उस साइकिलपर [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] था। [illegible] था।

पडोसमे अचानक गुण्डे आ बसे। हर रोज सिकन्दर साइकिलोकी चोरियोकी खबरें लाते थे और बदहवास-से रहते थे। एक दिन जो सिकन्दर पोस्ट-आफिस गये खत डालने तो उनको वहाँ दीवानजी (पुलिस कॉन्स्टेबिल) मिल गये। पुलिसवालोको देखकर तो सिकन्दरका चुल्लुओ खून बढता है। फिर दीवानजी भी आखिर सिकन्दरकी कमजोरीसे वाकिफ थे। उन्होने मुहल्ला ऊपरकोटके एक रिटायर्ड कान्स्टेबिलका जिक्र छेड दिया, जिसकी दो बेटिया शादीके काबिल थी। दीवानजी भी जल्दीमे थे और किसी तरह पोस्ट आफिसमे सिकन्दरकी बकवासमे वक्त खराब न करना चाहते थे। लेकिन मुश्किल ये आ पडी थी कि उन दिनो दीवानजीकी ऊपरकी आमदनी कुछ यूँ ही सी रही थी और त्योहार नजदीक था। इसलिए सिकन्दरसे उनको शादीका तजकिरा जरूरी ही करना पडा। सिकन्दर हस्बमामूल खिल उठे और बोले, "अब कहिए दीवानजी, मै आपकी क्या फरमाइश ...?"

दीवानजी बोले, "भइया, तुम जानते हो हम तो तुम्हारा घर बसाना चाहते है। इसी नीयतमे लडकीवालोपर नजर रखते है। कुछ रुपया-पैसा भी उनपर खर्च करते है कि तुम्हारा काम निकल जाये। अब यही ऊपरकोटवालोको देखो, घरवाले सब ठीक-ठाक कर लिये थे लेकिन लडकीका भाई अड गया है कि हम तो लडकेको देखेगे, फिर कुछ कहेगे।"

'लडके' के नामपर सिकन्दर मुसकराये, कुछ शरमाये, फिर बोले, "अच्छा – तो इसमे क्या मुजायखा (मुजायका) है? लडकेमे क्या खराबी (खराबी) है – मरीज (मरीज) है लडका कि बीमार है लडका! तुमने बता नही उनसे दीवानजी, कि लडका हजारोमे एक है, पान तक इसमे नही और किसी ऐबमे वह नही, सारे कालिजमे हम सरनाम है, जिससे चाहे पूछ ले हमारी बाबत –।"

दीवानजीने कहा, "ये बातें तो मैने सब उनको बता दी। मगर तुम जानो लडकीका मामला है, छानबीन तो करते ही है घरवाले।"

दीवानजीने कहा, "आज रातको लडकीके भाईको ज़रा सिनेमा ले जाऊँगा। वहाँ चाय-पानीसे उसकी खातिर करूँगा, देखो शायद जम जाये तुम्हारा मामला।"

सिकन्दरने बडी शानसे जेबमें हाथ डालकर दस रुपये दीवानजीकी नजर किये। दीवानजी बोले, "अरे भई, इतनेमें तो आज-कल सादा पानी भी कोई न पिलावे है किसीको, और तुम चले हो अपने सालेको इस रकम-से टालने। सालेको, यानी बीबीके भाईको!" हाय-हाय, सिकन्दर इस रिश्तेका नाम सुनकर शरमा-शरमाकर मुसकराते रहे और बोले, "हाँ, साहब, सालेकी तो बात ही और होती है। लोग-बाग कहे हैं, तो सारी खुदाया एक तरफ, जोरूका भाई एक तरफ।" पाँच रुपये सिकन्दरने बीबीके भाईकी खातिरके लिए दीवानजीको और दिये। फिर एहतियातन पूछ बैठे, "कोई बहन भी है उनकी?"

दीवानजी ज़रा चकराये। फिर सँभलकर बोले, "हाँ-हाँ, क्यों नही, क्यों नही। भरे घरकी लडकी है भई। दो बहनें उसकी और हैं।"

"दो और हैं?" सिकन्दर खुश और इतमीनानसे बोले।

"हाँ भई, दो और हैं।" दीवानजीने जवाब दिया।

सिकन्दर मुसकराते हुए बोले, "बस दीवानजी, हमारा दिल कहे है कि सिकन्दर तेरा काम तो यहीं बनेगा। अरे साहब, एकसे न होगी शादी तो दूसरी तो है। और वह भी किसी वजहसे रह गयी तो फिर तीसरी कहाँ जायेगी कमबख्त?"

दीवानजी अब जल्दसे जल्द भागना चाह रहे थे। बोले, "हाँ जी, तीसरी कहाँ जायेगी! हमने तो, सिकन्दर, इसी खयालसे इस बार ऐसा घर चुना है जहाँ तीन तीन लौंडियाँ मौजूद हैं। अब भई, कोई एक तो तेरे मुकद्दरमें होगी ही।"

दीवानजी चले गये। सिकन्दर थोडी देर तक लोहेका जंगला पकडे खडे रहे। वह तीनों लडकियोंके खयालमें गुम थे। जब वह अपने खयालोंको

आप आये हैं

सिकन्दरको घूमने-फिरनेका बहुत शौक है। दिल्लीमें उन्होंने एक सरदारसे दोस्ती कर ली थी, उसीके साथ बाहर आते-जाते थे। एक दिन बहुत शाम गये तक भी न लौटे तो मुझे फिक्र शुरू हो गयी। आखिरमें आठ बजे रातको सिकन्दर अकेले घर लौटे। मैंने उन्हें डाँटा कि इतनी देर तक कहाँ गायब रहे सारे काम छोड़कर ?"

बोले, "अरे साहब, क्या बतायें, आज क्या किस्सा हो गया।"

मैंने पूछा, "क्या किस्सा हो गया ?"

कहने लगे, "देखिए तो। हुआ यह कि हम दोनों, यानी सरदार और मैं, चले बाजार। पहले पहुँचे फतेहपुरी। वहाँ मैंने खरीदा कोयला, और जो मुड़कर देखा तो क्या देखा कि न सरदार न मैं। वहाँसे घबराया-घबराया मैं आया चाँदनी चौक। इधर देखा, उधर देखा, लेकिन देखा कि

न सरदार न मैं। वहांसे भागा-भागा आया कश्मीरी गेट। फिर देखा कि न सरदार न मैं। इसी चक्करमें घर पहुँचा तो देखा न सरदार न मैं।

सिकन्दर यह कहते जाते थे और हाथोंको नचाते जाते थे। अब उनसे कोई क्या पूछता कि भई सरदार तो नहीं था लेकिन आखिर यह 'मैं' कहाँ चला गया था। लेकिन सिकन्दरकी जबानपर तो मुहावरा चढ़ा था कि न आदम न आदमजाद—उन्हें कौन कुछ समझा सकता था।

दंगोंके जमानेमें सिकन्दर दिल्लीमें थे, लेकिन तफसीलसे कुछ न जानते थे। उन्हें तो बस यह मालूम था कि लड़ाई-झगड़ा हो रहा है। कौन किससे झगड़ रहा है और क्या झगड़ा हो रहा है और [illegible] किसका भारी है। इन सब बातोंका न तो सिकन्दरको पता था और न वह ऐसी बातोंपर ध्यान देनेके काबिल थे। उन्हें तो सिर्फ यह बात खलती थी कि वह आजादीसे घूम-फिर नहीं सकते थे और घरपर पड़ा रहना सिकन्दरके लिए तकरीबन सूलीपर लटकनेके बराबर होता है।

एक दिन अपने दोस्त सरदारसे बोले, "भई, घरमें बैठे-बैठे घबरा गये हम तो। कहीं बाहर चलो घूम-फिर आयें।"

सरदारने उनकी तरफ हैरतसे देखा फिर कहा, "आज नहीं, कल चलेंगे जरा बाहर घूमने-घामने।"

"कल ही सही", सिकन्दरने कहा और बैठ रहे। दूसरे दिन फिर सिकन्दरने सरदारको याद दिलायी, "भई, कल तो तुम कह रहे थे, आज तो जरूर ही चलो बाहर।"

सरदारने तफरीहको और टालना चाहा। कहा, "भई, [illegible] मियाँ बात यह है कि भई, ऐसी जल्दी क्या है? [illegible] दो फिर चलेंगे घूमने-फिरने।"

सिकन्दर बोले, "ऐसी क्या बेइतमीनानी है? [illegible] आज, हम तो आज जरूर ही बाहर जायेंगे।"

सरदारने इस अहमकको समझाना चाहा। "अरे भाई सिकन्दर [illegible],

सि०—३ [illegible]

तुम समझते नही हो अभी शहरकी हालत ठीक नही है। घरसे अभी कुछ दिन तक नही निकलना चाहिए।"

"क्यो नही निकलना चाहिए ?" सिकन्दरने झुँझलाकर पूछा।

[illegible]न्दारने समझाते हुए जवाब दिया, "कह तो दिया तुमसे कि अभी शहरकी हालत ठीक नही है। थोडे दिन सबर कर लो फिर चलेंगे।"

अब सिकन्दरके सब्रका पैमाना मुँह तक भर चुका था। जलकर सर-[illegible]ने बोले, "अच्छा, अच्छा, तू यूँ कह कि डरता है हमसे। अरे भई, बेकज़्लमे डरता है तू हमसे। चल हमारे साथ, हम तुझे अकीन दिलाते है। हमसे मत डर, हम तुझे कुछ नही कहेंगे।"

उसी जमानेमे एक दिन खरीदारोके लिए सिकन्दर कही बाहर गये तो नौ बजे रात तक उनका कोई पता न चला। हम सब सख्त परेशान और बदहवास थे और बेचैनीमे सिकन्दरका इन्तजार कर रहे थे। करीब नौ बजे रातको सिकन्दर हाँफते-काँपते गुस्सेसे लाल-पीले, मुँह ही मुँहमें किसीको कुछ बुरा भला कहते घरमे दाखिल हुए। जब करीब आये तो यह कहते सुने गये कि, "यह भी कोई शराफत है। निहत्था देखकर हमला कर बैठे। होता हमारे पास भी कोई डण्डा तो पूछते।"

सिकन्दरको बार-बार अपने निहत्थेपनका और हमला करनेवालेकी [illegible] हरकतका चर्चा करते सुना तो सब लोग घबरा गये।

फसादका जमाना था। तरह-तरहके खयाल लोगोके दिमागमें आ रहे थे। आखिर [illegible] आदमीने आगे बढकर पूछा, "किसने हमला किया ? कौन था वह ?"

सिकन्दर गुस्सेसे बोले, 'होता कौन ? दो यह डबल कुत्ते थे।"

[illegible] सब घबराते सो रहे थे कि सिकन्दरने अचानक घरके [illegible] पास आकर आवाज दी, "साहब ! साहब !!"

गालिब घबराकर उठ बैठे, बोले, "क्या है सिकन्दर ? खैरियत तो है ?"

"खैरियत कहाँ साहब — वह स्याप आये है।"

"कौन साहब आये हैं? क्या कोई मेहमान है?"

"मेहमान नही साहब। स्याप आये है।"

"अरे भई, कौन साहब? क्या खाँ साहब आये हैं?"

"जी नही, साहब, खाँ साहब नही, सिर्फ स्याप आये है।

घरके मालिकको अब गुस्सा आ चुका था। बिग[illegible] हुए [illegible], "आखिर साफ-साफ क्यो नही बताता है कौन साहब आये है?"

सिकन्दरने उसी इतमीनानसे जवाब दिया, "साफ साफ [illegible] रहा हूँ, साहब, कि स्याप आये है।"

साहबने गुस्सेसे पूछा, "क्या नाम है उन साहबका?"

"नाम? नाम कैसा?" सिकन्दरने हैरत[illegible] पूछा।

साहब अब उठकर बैठ गये थे और सिकन्दरकी बातोंपर [illegible] गुस्सा उनको आ रहा था। आखिर उन्होंने [illegible] पूछा, "आखिर वह साहब हैं कहाँ?"

सिकन्दर आगे बढ़कर हौलेसे बोला, "आप [illegible], [illegible] बाहर है।"

■

सिकन्दर और कालीदास

अच्छा-भला शब्द सिकन्दरकी ज़बानपर चढ़ता है तो कुछका कुछ हो जाता है। एक दिन मैंने उनको बाज़ार जाते देखा तो फरमाइश की कि [illegible] [illegible] और यूडी-कोलोन खरीदते लायें।

सिकन्दर घर लौटे तो बहुत नाराज़ थे। बोले, "जाने कहाँके बेवकूफ दूकानदार आ गये हैं [illegible] बिल्डिंगमें, कोई बात ही नही समझते हैं।"

मैंने पूछा, "आख़िर हुआ क्या?"

"[illegible], हमने दुकानदारसे कहा कि ज़रा कालीदास दे दो तो उसने [illegible] किया। हमें बड़ा गुस्सा आया और हमारा उससे झगडा हो गया। [illegible] हो गये।"

दुकानदार कहने लगा, कालीदास हम कहाँसे ला दें आपको?

[illegible] क्यों नहीं, क्या गवर्मिन्टने मनाही कर दी है कालीदास

दुकानदारने तग आकर उन्हे फिलटका डब्बा थमा दिया जिसे सिकन्दरने काउण्टरपर पटक दिया और बोले, "वाह साहब वाह, फिल्लीटको हम नही पहचानते है क्या? इससे तो मक्खियाँ मरती है।"

आखिरकार दुकानदारने उनसे कहा, "तुम खुद इशारा करके बताओ कि कौन-सी शीशी तुम्हे चाहिए।"

सिकन्दरने यूडी-कोलोनकी शीशी देखी तो चीखकर बोले, "बस यही तो है गोली कुनैनकी शीशी। यही तो हमें चाहिए।" और इस तरह केमिस्टकी जान बची।

■

सिकन्दर चोरीमें पकडे गये

पुलिसवालोंसे सिकन्दरको दिलचस्पी हदसे हद बढ़ी हुई है। दुनियामे उनपर किसी इनसानका या किसी ओहदेका वह रोब नही पड़ता है जो पुलिसकी वर्दी पहने हुए किसी भी उल्टे-सीधे आदमीको देखकर पड़ता है। उनके ख्यालमें पुलिसका कान्स्टेबिल होना दुनियाकी सबसे बड़ी नेमत है। कान्स्टेबिलको बडी इज़्ज़त और सम्मानसे 'दीवानजी' कहते हैं और यह शब्द उनके मुँहमे मिसरीकी डलीकी तरह घुल जाता है।

एक बार घरमे एक सूबेके गवर्नर साहब, जिनसे घरवालोंसे पुराने सम्बन्ध थे, उनके आनेके सिलसिलेमें एक दिन पहले शहरके आस-पास, पुलिस या सी० आई० डी० के आदमी जाब्तेकी खानापूरीके लिए आ-जा रहे थे। सिकन्दरकी खुशीका कोई ठिकाना ही न था। बार-बार इस तरह भाग-भागकर बाहर जा रहे थे और इस तरह पुलिसवालोंकी

लावभगत कर रहे थे जैसे अपनी वारातकी देखभालमें मगन [illegible]। [illegible]धन्धा सारा काम काज उन्होंने छोड़ रखा था और सारा ध्यान [illegible]-पर लगा रखा था।

दूसरे दिन सुबह ९ बजे गवर्नर साहब आये तो सिकन्दर भी [illegible] खानेके आस पास मँडलाते दीख गये। उनके हाथमें पानीसे भरा [illegible] एक गिलास था और वह इन्तजार कर रहे थे कि जल्दसे [illegible] छूटे तो वह वाहर निकल सकें।

गवर्नर साहवने सिकन्दरको जो देखा तो वड़े तपाकसे आगे [illegible] और बोले, "अरे भई, सिकन्दर, अच्छे तो हो। आओ जरा हाथ मिलाओ।"

सिकन्दरने वड़ी उजल्तमें जवाव दिया, "जी हाँ अच्छे हैं हम।" और हाथ मिलानेके प्रस्तावको उन्होंने यह कहकर ठुकरा दिया कि, "साहव, जरा रास्ता दीजिए, हम वाहर जायेंगे। वाहर दीवानजी [illegible] हैं, उनके लिए पानी ले जा रहे हैं हम।"

एक वार पटोममें चोरी हो गयी। सिकन्दरकी खुशीकी [illegible] नहीं था। लोग-वाग चोरकी खोजमें थे और चोरीके वारेमें वातें कर रहे थे। सिकन्दरको पुलिसवालोंका इन्तजार था और दीवानजीके आते ही उन्होंने आगे बढ़कर और हाथ चला-चलाकर चोरीकी तफसील बयान करना शुरू की।

थानेदारने मालिक-मकानसे पूछा, "आपने कोई नया नौकर रखा था?"

सिकन्दर आगे बढ़कर बोले, "अरे दीवानजी, हर रोज नये नौकर [illegible] रहते हैं यहाँ। कोई दो दिनसे ज्यादा टिकता ही नहीं है।"

मालिक-मकानने कहा, "इधर एक महीनेसे तो एक ही नौकर काम [illegible] रहा है।"

थानेदारने पूछा, "चोरी किस कमरेमें हुई?"

सिकन्दरनामा

मालिकने कहा, "हम लोग बरामदेमे सो रहे थे, सामान बैड-रूममे था, उसी कमरेमे चोरी हुई।"

सिकन्दरने कहा, "इसके मतलब यह हुए कि चोर बरामदेमे नही बल्कि पीछेकी खिडकीसे कूदकर कमरेमें दाखिल हुआ।"

थानेदारने पूछा, "आप लोगोको कोई खटका वगैरह तो नही सुनाई दिया था ?"

सिकन्दर बोले, "खटका तो ज़रूर ही हुआ होगा, यूँ कहिए कि यह लोग बे-खबर सो रहे थे।"

थानेदारने कहा, "आपका कुत्ता घरके अन्दर था कि बाहर ?"

सिकन्दरने जवाब दिया, "कुत्तेको तो ऐसे मौकोपर चोर नशा खिला देते हैं।"

थानेदारने पूछा, "घरके बाहरकी बत्ती जल रही थी कि नही ?"

सिकन्दरने कहा, "दो-ढाई बजे रात तक तो जल रही थी, उसके बाद हम सो गये थे, पता नही कबतक जली। वैसे चोर ऐसे मौकेपर पत्थर मारकर बल्ब भी तोड दिया करते है।"

सबने एक साथ बाहरकी बत्तीपर नज़र डाली तो इत्तफाकसे बल्ब टूटा हुआ मिला। सिकन्दरने बडे फख्रसे सबकी तरफ देखा। वह अपनी इस जानकारीपर बहुत खुश नज़र आ रहे थे।

इसी तरह उन्होने चोरीके सम्बन्धमे कुछ ऐसी बाते कह डाली थी जिससे अन्दाजा होता था कि न सिर्फ यह कि सिकन्दरको चोरीके बारेमे कुछ बातें मालूम है बल्कि यह कि शायद वह खुद उस चोरीमे शामिल भी रहे है।

आँखो देखा हाल बयान करनेकी उनकी आदत है। फिर उस दिन इत्तफाकसे दीवानजी भी कोई नये थे। उन्होने सिकन्दरको इस तरह बढकर बोलते सुना तो उन्हे सिकन्दर ही पर कुछ शुबहा होने लगा और उन्होने सिकन्दरसे कहा, "तुम मेरे साथ थाने चलो। वहाँ तुम्हारा बयान

कलमबन्द होगा।"

सिकन्दरने अपनी इस अहमियतपर और भी इतमीनान जाहिर किया। इधर-उधर मजमेपर नजर डाली और बडे तपाकसे बोले, "थाने ले जाकर क्या कीजिएगा, कलम तो आपके पास है ही उसमे हमारा बयान दर्ज कर दीजिए।"

दीवानजी जरा कडवे मिजाजके थे। वह सिकन्दरके उस बालिहाना रुतबे बिलकुल अनजान थे जो सिकन्दरको पुलिसके महकमेके लोगोसे था। बिगडकर बोले, "बक-बक मत करो, सीधे-सीधे चलो थाने। वहाँ तुम्हारा मिजाज ठीक करेगे।"

अब सिकन्दर मामलेकी नजाकत तक पहुँच गये थे। खुद भी बिगडकर बोले, "मालूम होता है नये-नये आये हो दीवानजी इस इलाकेमे?"

दीवानजीने कहा, "हम नये-नये आये है कि नही इससे तुम्हे क्या मतलब।"

सिकन्दर झुँझलाकर बोले, "आखिर आपको हमपर क्या शुबहा है? हम चोर लगते है आपको?" फिर बहुत अकडकर बोले, "अच्छा साहब, हम चोर है, हमने की है चोरी। अगर असल-नसल दीवानजी है आप तो निकालिए चोरीका माल हमारे पाससे।"

जिस घरमे चोरी हुई थी उसके लोग इस झगडेपर सख्त कुढ रहे थे। उनका मामला जहाका तहाँ था, और इधर सिकन्दर मियाँने एक दूसरा मामला खडा किया था।

दीवानजीने जल्दी-जल्दी छोटे-छोटे फिकरोंमें सिकन्दरके बारेमें बताया तो कप्तान साहबको हँसी आ गयी। वह सिकन्दरकी पूरी हिस्ट्रीसे वाकिफ थे। उन्होंने सिकन्दरसे कहा, "मियाँ, घर जाओ, हमारे लिए चाय बनाओ, वहीं आकर बात करेंगे।" और दीवानजीसे कहने लगे, "दीवानजी, इस इलाकेमें आये हुए आपको चार-पाँच महीने हो गये और अब तक सिकन्दरको नहीं जानते हैं आप! इस तरह कैसे काम चलेगा?"

सिकन्दर झूमते-झामते, जैसे बहुत बड़ा मोर्चा मार लिया हो, घर आ गये और बात आयी-गयी हो गयी। लेकिन इस घटनासे इतना फर्क जरूर पड़ा कि आइन्दासे सिकन्दर इतने सावधान रहने लगे हैं कि दीवानजीकी वर्दीसे बात-चीत करनेसे पहले, उनका चेहरा-मोहरा भी देख लेते हैं।

■

डाक न आयी, घरवालोंको डाकका इन्तज़ार करते देख सिकन्दर अचानक घरसे गायब हो गये और सीधे सीधे पोस्ट-आफिसकी तरफ साइकिल दौडाने लगे।

रास्तेमें दो बार कान्स्टेबिलने सीटी दी, जिसे सिकन्दरने बहरे होनेके कारण सुना नही और आगे बढते गये। नुक्कडवाले कान्स्टेबिलने हाथ दिखाकर उनको रोकना चाहा तो बोले, "हम जल्दीमें हैं, डाक पहुँचानी है घर। देखते नहीं हो, दीवानजी, हम कौन हैं ?" फिर अपनी गान्धी टोपीकी तरफ इशारा करके बोले, "यह नही देखते हो, क्या है ?" दीवानजीने हैरत और बेज़ारीसे पूछा, "यह क्या है ? टोपी है।"

बोले, "तुम्हें यह सिर्फ टोपी ही लगे है ? अरे भैया, हमने तो सुना है जो यह टोपी पहन लेता है वह सरकारका आदमी हो जाता है।"

दीवानजीको सिकन्दरके भोलेपनपर हँसी आ गयी और उन्होंने कहा, "सीधे-सीधे घर चले जाओ।" लेकिन सिकन्दर सीधे पोस्ट-आफिस पहुँचे और उस बेचारे डाकियेसे, जो उन दिनों हमारे मुहल्लेमें डाक लाता था, बोले, "क्यों जी, डियूटी भी कोई चीज़ है। तीन दिनसे डाक-का इन्तज़ार हो रहा है और तुम यूँ आराम कर रहे हो। शरम ना आवे है तुम्हें ?"

डाकियेने कहा, "भैया सिकन्दर, हम तो बाल बच्चेवाले आदमी है। जान प्यारी है हमें तो। मर गये तो बीबी-बच्चोंको कौन पूछेगा ?"

सिकन्दरको बच्चोंसे तो दिली नफरत है। इसलिए बच्चोंका मसला तो गोल कर गये लेकिन जब घर आकर यह किस्सा सुना रहे थे तो उनके तेवरसे अन्दाजा होता था कि गालबन डाकियेकी बीबीके भविष्यकी तरफ से काफी मुतमइन हैं।

डाकियेसे यह बातें करी और जितनी डाक उनके हाथ लगी सब समेटकर अपने थैलेमें रखी, घर चले आये और बरामदेमें फर्शपर सारी डाक फैला दी। घरवालोंको डाक देकर, पूरे मुहल्लेकी डाक बाँट आये।

यूँ तो सिकन्दर अपनी कड़वी जबानकी वजहसे अकसर दुकानदारों वगैरहको नाराज करते रहते हैं, लेकिन अब्दुल शकूर नामी एक फलवाले-से इनकी नोक झोक आये-दिन होती रहती है और सिकन्दरका गुज़र जब भी उसकी दुकानकी तरफसे होता है, उससे मुखातिब होकर यह जरूर कह आते हैं कि "तू ठहरा एक नम्बरका बेईमान, हम तुझसे बेहद करके नफ़रत करते हैं।"

कर्फ्यू खत्म हुआ, और हालात नॉर्मल होने लगे तो सिकन्दर शहरकी सदर मेन बाजार पहुँचे। वहाँ उन्हें बहुत सारे जान-पहचानवालोंकी कमी नजर आयी। आगे बढ़े तो देखा कि अब्दुल शकूर अपना फलोंका ठेला लिये बीच चौराहेमें खड़ा है। सिकन्दर हर चन्द कि उससे खफा रहते थे लेकिन कुछ हालातके तहत नर्म लहजेमें उन्होंने आगे बढ़कर उससे किसी फलकी कीमत पूछी। उसने हमेशाकी तरह दाम दुगने बताये। सिकन्दर-का पारा चढ़ गया, गुस्समें आपेसे बाहर होकर बोले, "अबे, तेरा दिमाग अब भी ठीक नहीं हुआ, लोग-बाग कहे थे कि तेरे जैसे सब मर-खप गये, पर तू तो जैसा है वैसा ही का वैसा। तुझमें तो कोई फरक न पड़ा, वैसा ही [illegible] है तू तो।" फिर कुछ सोचकर बोले, "ठहर जा! [illegible] फिर ने। अल्लाह चाहेगा तो हम जरूर ही तुझे [illegible] खतम करेंगे।"

[illegible] है कि सिकन्दर दानकी तरफ कभी जाते ही नहीं हैं। न [illegible] वाकिफियतसे [illegible] थी और न मुहावरेके गलत [illegible]।

बाज़ारमें खुली है । बड़ी-बड़ी बढ़िया मिठाइयाँ बनती हैं वहाँ । और साहब, लोग-बाग कहते हैं कि दहीकी लस्सी तो बड़ी ही मशहूर है वहाँ-की । ऐसी लस्सी तो सारे शहरमें कोई नहीं बना सकता है जैसी यह हलवाई बनाता है ।"

पूछा गया, "तुमने खुद भी चखी है लस्सी कि बस सुनी सुनायी तारीफ कर रहे हो ?"

सिकन्दर बोले, "साहब, कल शाम हमारा इरादा तो था लस्सी पीनेका लेकिन फिर वह बात कुछ ऐसी हो गयी कि इरादा बदलना पड़ा ।"

"क्यों भई ऐसी क्या बात हो गयी ?"

बोले, "कल शाम जब हम बाज़ारसे सौदा खरीदकर उस हलवाईकी दुकानके सामनेसे गुज़रे तो साइरन बजने लगा । हलवाईने हमें आवाज देकर कहा कि, "भाई सिकन्दर मियाँ, लस्सी तैयार है । आइए, रोजा खोलते जाइए ।"

हमने हलवाईसे कहा, "भाई साहब, आपकी लस्सीकी तारीफ तो हमने भी सुनी है, और आप कहते हैं तो जरूर ही आपकी लस्सी एक लम्बरकी होगी । हमारा दिल लस्सी पीनेको भी चाह रहा है । लेकिन क्या करें हम बहुत मजबूर हैं । हम लस्सीसे रोजा नहीं खोल सकते हैं यूँ कि हमारा तो रोज़ा ही नहीं है ।"

■

सिकन्दरने बेजारीसे कहा, "समझमें नही आता, आखिर इस कमबख्त चाँदमे खास बात क्या है जो सब इसको देखे है। चालीस साल-से हम इसको देखते आ रहे है, निकलता है, डूबता है – इसमे आखिर खास बात क्या है ?"

गर्मियोकी छुट्टीमें जबकि हम लोग नैनीतालमे थे, एक दिन बैठे-बिठाये पिकनिकका प्रोग्राम बन गया, और खुरपाताल – नैनीतालसे कुछ मील दूर नीचेकी ओर एक खूबसूरत-सी घाटी – जाना तय हुआ। सिकन्दरको मालूम हुआ तो बहुत बद-दिलीसे उन्होने पिकनिकका सामान तैयार करना शुरू किया। बहुत नाराज़ होकर बोले, "समझमे नही आता, यह बेगम साहबको बैठे-बिठाये क्या हो जाता है ? अच्छा भला घर छोडकर जगलमे जानेका पुरोगिराम बना लेती है। भला पूछो, अच्छी खासी मेज़-कुर्सी छोडकर वहाँ कूडे-करकटपर बैठकर खाना खायगी, तालके गन्दे पानीसे हाथ धोयेंगी, घासपर उठे बैठेंगी। आने-जानेमे जो थकन होगी और अलग !"

आखिरकार इसी तरह बुदबुदाते और बडबडाते हुए सिकन्दर हम लोगोके साथ रवाना हुए। जब काफी देर हो गयी और सिकन्दरका मिज़ाज बदस्तूर कडवा रहा तो हममे-से किसीने उनको खुश करनेकी खातिर उनसे कहा, "अरे सिकन्दर, देखो तो कैसा खूबसूरत नजारा है।"

सिकन्दरने त्यौरीपर बल डाले डाले पूछा, "किधर, किधर है नज़ारा ?"

कहा गया, "देखो वह सामने किस कदर खूबसूरत पहाडी है। मवेशी किस कदर खुशीसे इधर-उधर घूम-फिर रहे है। वह चरवाहा अपनी बाँसरी लिये पेडकी डालपर बैठा है। सामने झरना बह रहा है।"

सिकन्दरने बहुत ही बुरा-सा मुँह बनाकर कहा, "तो साहब यह

नज़ारा [illegible]! इसमें न्यारी बात क्या है, सामने एक ईंट-पत्थरका [illegible], जहाँ गाय-बैल घास चर रहे हैं। एक गन्दा गलीज़ काला-सा नाला [illegible] रहा है और जो अभी डाल टूटी और आ पड़े बच्चा [illegible] तो पता चलेगा कि चरवाहा किसे कहे हैं। और इसमें नया क्या है, पानी ऊपरसे गिरे है तो नीचेको तो आवे ही है। सदासे यही मामला रहा है दुनियाका, आप उसको झरना बनाये दें हैं, अब हम आपका क्या फरमाये?"

[illegible]को प्राकृतिक दृश्योंके बाद अगर किसी चीज़से बेहद करके नफरत है तो वह छोटे-छोटे बच्चे हैं, कहते हैं, "साहब समझमें नहीं आता आखिर इनसे फायदा क्या है? हर वक्त दंगा फसाद मचाते रहते हैं, [illegible] हैं, और हर वक्त उनकी देख-भाल अलग करना पड़ता है।

सिकन्दर दवा लेने गये

कुछ दिनोसे सिकन्दर किसी गहरे सोचमे खोये-खोये से नजर आते थे, और चलते-फिरते अपने स्वभावानुसार अपने-आपमे कुछ बातें भी करते जाते थे। एक दिन दोपहरको काम-काजमे निवृत्त होकर मियां सिकन्दर अपनी कोठरीमे नियमानुसार आराम करनेके लिए जाकर लेटे ही थे कि अचानक घरकी मालकिनकी तबियत खराब हो गयी और सिकन्दरको जल्दी ही दवा लेने बाजारकी डिस्पेन्सरी जाना पड़ा। सिकन्दरको अपने आरामके समय किसीकी रोक टोक बिलकुल पसन्द नहीं है, लेकिन यह समय ऐसा था कि चुपचाप उन्होंने अपनी साइकिल सँभाली और घरसे निकल गये। तीसरे पहर तीन बजे वह रवाना हुए थे। कायदेसे पाँच बजे उनको वापस आ जाना चाहिए था। लेकिन जब वह एक घण्टे तक भी वापस न आये तो दूसरे नौकरको दवा लेनेके लिए भेजा गया। वह नौकर

दवा लेकर आ भी गया। बीमारको दवा भी दे दी गयी और उसकी तबि-यत भी संभल गयी। शामके बाद रात आ गयी। बत्तियाँ जल गयी, आठ बजनेको आये लेकिन सिकन्दरका दूर-दूर तक कोई पता न था। घरवालो-ने पहले उनका इन्तजार किया, फिर उनपर गुस्सा आने लगा और वह तब भी न पहुँचे तो उनकी ओरसे चिन्ता शुरू हो गयी।

लगभग नौ बजे सिकन्दर घरमे दाखिल हुए। कुछ लँगड़ाकर चल रहे थे। पाजामेका पायँचा मोड़ मोड़कर ऊँचा कर रखा था। पिण्डलीपर बड़ा सा लगा हुआ घाव नजर आ रहा था और साइकिलको कुछ इस तरह पकड़े हुए थे वह, जैसे वह साइकिलको नही बल्कि साइकिल उनको सहारा देकर यहाँतक लायी हो। ऐसे अवसरपर गुस्सेकी गुंजाइश तो थी नहीं। सब लोग उनकी तरफ परेशानीसे देखने लगे। दूसरोको अपने लिए परेशान पाकर सिकन्दरके चेहरेपर विचित्र-सा गर्व उभरने लगा और साइकिलको दीवारसे टिकाकर वह बड़े गर्वसे आगे बढ़े —

"यह सब क्या हुआ?" घरके मालिकने बड़े ताज्जुबसे उनसे पूछा।

सिकन्दरने अपने पिण्डलीके घावकी तरफ इस तरह इशारा करते हुए [illegible] घाव नहीं उनको किसी वीरताका पदक हो, "जी? यह? [illegible] किस्सा है — अभी सुनाते हैं।"

[illegible] ने कहा, "किस्से-कहानीको छोड़ो, यह बताओ कि यह [illegible]"

बताओ कि हुआ क्या ?"

सिकन्दर बोले, "होता क्या साहब, हम शुरू-आखिरीमें आपको सुनाते हैं कि क्या हुआ। हम दो-पहरको खाना खाकर अपनी कोठरीमें गये और हमने कहा कि भाई सिकन्दर अब तो ढाई बजनेवाले हैं, चार बजे चाय देना होगी। तुम्हारे पास वक्त कम है, जल्दीसे सोनेकी कोशिश करो लेकिन ।"

"लेकिन-वेकिन क्या ? तुम्हारा प्रोग्राम कौन पूछ रहा है, सीधे सीधे जल्दीसे यह बता दो कि तुम्हे चोट कैसे लगी ?"

सिकन्दर थोडा झुँझलाकर बोले, "जबतक शुरूसे नही सुनायेंगे पूरी बात हम आपकी समझमें बात नही आयेगी। हुआ यह कि हम कोठरीमें सोने लेटे ही थे कि सुगरी आ गयी हमें जगाने। हमने कहा भला तू औरत जात, तुझे किसने कहा था कि तू हमारी कोठरीमें दिन-दहाडे घुस आये! सुगरी बोली सिकन्दर जल्दीसे उठ, देख बेगम साहबकी तबियत खराब हो गयी है। जल्दीसे दवा लेकर आ। अब साहब, हम क्या करते ? हमने कहा चल भई सिकन्दर चल! पर साहब इस घरका भी अजीब हाल है – चौबीस सालसे हम यहाँ हैं, एक अजीब बात जो हमने बराबरसे देखी है और जो हमको बेहद करके नापसन्द है वह यह है कि यहाँ बीमार होनेका न तो कोई वखत है न कोई टेम – ऐसे बेढब वगैरह बीमार होने-का फैशन इस घरमें चलता है कि हम क्या करें! कभी आज तक कोई हमको बीमार होनेसे पहले कोई खबर, कोई इत्तला, नही देता है और जब जी चाहे है, रात हो कि दिन हो, आराममें बीमार पड़ जाता है और फिर मुसीबत आवे है सिकन्दरकी!"

साहब सिकन्दरकी बातपर झुँझलाकर बोले, "अच्छा अच्छा, दिमाग मत चाट। अपनी बेकारकी बातें बन्द कर और सिर्फ इतना बता दे कि यह तकलीफ तुझे कैसे हुई ?"

सिकन्दर बोले, "साहब, सब्र कीजिए – अब हम इसीपर आते हैं।

सामनेपर आनेवाले हैं। फिर यह हुआ कि जब हमको इत्तला मिली कि बेगम साहबाको नरका दौरा उठ गया है तो हम भी उठ गये। हमने अपनी कोठरीमे ताला लगाया, अन्दर आकर साइकिल उठायी और दरवाजेमे बाहर निकल गये। मिश्रा (डिस्पेन्सरीका मालिक) से हमने दवा ली। उसको पैसे दिये, रेजगारी संभालकर जेबमे रखी, दवाकी शीशी थैलेमे डाला, और रवाना हो गये घरके लिए। जब हम पुलियाके पास पहुँचे तो हमारी साइकिलकी चेन उतर गयी। अब हम अजीब मुसीबतमे फँस गये थे। हमने बहुत कोशिश की, पर किसी तरह भी वह चेन हमसे नही लगी तो हमको सामनेकी दुकानसे भाई साहब मुहम्मद शकूरने पुकारा।"

"भाई साहब मुहम्मद शकूर कौन?"

'वह एक साइकिलकी मरम्मत करनेवाले हैं। उनको लोग-बाग मुहम्मद शकूर पुकारते हैं लेकिन हमसे उनकी पुरानी मिल्लतदारी है इस-लिए हम उनको भाई साहब मुहम्मद शकूर कहकर खिजाब (खिताब) करते हैं। "

'खिजाब करते हैं" सुनकर बेसाख्ता हम सबको हँसी आ गयी।

शेख साहबको हम लोगोकी हँसी पसन्द नही आयी। तेवरीपर बल डालकर बोले, "अब साहब चाहे तो आप लोग हँस लीजिए चाहे तो हमारा [illegible] उड़ा लीजिए।'

मुसकराये और बोले, "अरे साहब, आप तो बड़ी जल्दी समझ गये – हमे कुत्तेने तो नही, एक कुतियाने काट खाया है। यह उसीका तो घाव है "

"अरे-रे-रे," साहब घबराकर बोले, "चे चे-चे – तुझे कुत्तेने काट खाया ?"

"जी नही, कुत्तेने नहीं, कुतियाने काटा है", सिकन्दर मुसकराकर बोले।

साहब घबराकर बोले, "इतनी देरसे खड़ा खड़ा उल्टी-सीधी बाते कर रहा है और यह नही बताता कि कुत्तेने काटा है। अरे जल्दीमे बड़े अस्पताल जा मेरा खत लेकर और फौरन ही इजेक्शन लगवा।"

सिकन्दर बोले, "अरे साहब, पूरा किस्सा तो सुन लीजिए। उस बेचारी कुतियाकी कोई खता नही थी। वह तो पुलियाके नीचे अपने छोटे-छोटे बच्चोंको लिये हुए चुपचाप लेटी हुई थी। पहले तो उन्होंने हमारी तरफ नजर उठाकर भी नही देखा था लेकिन जब हमने साइकिल पुलियाके सहारे खडी की तो वह समझी कि शायद हम उनके दुश्मन है और शायद हम उनके बच्चोंको कोई नुकसान पहुचाने आये हैं। बस जब उनको यह गलतफहमी हो गयी तो वह आगे बढ़ी और हमारी तरफ गुस्सेसे देखकर भोंकने लगी और जल्दी-जल्दी दुम हिलाने लगी। हम दूसरी तरफ देखने लगे तो वह समझी कि हम जान बूझकर उनके बच्चोंको सतानेके लिए आये है, और बस फिर वह आगे बढ़ी और आगे बढ़कर उन्होने हमारी पिण्डलीपर अपना मुँह मारा। और जबतक हम शोर मचायें-मचायें, वह पुलियाके नीचे अपने बच्चोंके पास वापस चली गयी और हम अकेले खडे रह गये। जब भाई साहब मुहम्मद शकूर ने यह वारजात (वारदात) देखी तो वह हमारे पास आये और बोले, "भाई सिकन्दर क्या हुआ ?"

हमने कहा, "होता क्या ? यह जो पुलियाके नीचे कुतिया लेटी हुई है, उन्होंने ग़लतफहमीमें यह समझा कि हम शायद उनके बच्चोंके दुश्मन

रखेंगे और देखेंगे कि काश खुदा-ना खास्ता यह पागल तो नही है ।"

भाई साहबने कहा, "यह ठीक है सिकन्दर मियाँ, लेकिन आप इनको घर ले जायेंगे तो इनके छोटे छोटे बच्चोका क्या होगा – अभी तो इनकी आँखे भी नही खुली है ?"

हम बोले, "चे – चे – चे, अभी आँखें भी नही खुली है ? हमने तो सुना था कि सात दिनके बाद आँखे खुलती है । इसके मतलब तो यह हुआ भाई साहब कि अभी इनके बच्चे सात दिनके भी नही हुए है । चे – चे – चे – जभी तो बेचारी अपने बच्चोकी मुहब्बतमे मारी गयी ।"

भाई साहब बोले, "देखो सिकन्दर मियाँ तुम तो अल्लाहका नाम लेकर जाओ, मैं रोज इनको देखता रहूँगा । तुम बे-फिक्र रहो, अगर यह पागल-वागल हो गयी तो तुमको इत्तला दे दूँगा ।"

सिकन्दर बोले, "हमने कहा और भाई साहब अगर काश खुदा-ना-खास्ता हमे कुछ हो गया तो ?"

भाई साहब बोले, "क्या हो जायेगा ?"

हमने कहा, "यानी अगर हम मर गये ?"

भाई साहबने कहा, "बे-फिक्र रहो सिकन्दर मिया, इनको (कुतियाको) यही छोड जाओ और इतमीनानसे घर जाओ । मरनेकी बात मत करो— वैसे अगर तुम मर गये तो इसकी ज़िम्मेदारी हम लेनेको तैयार है ।"

सिकन्दरने बडे गर्वसे चारो ओर देखा और बोले, "ता साहब अ[illegible] काहेका – अब तो हम खतरेसे बाहर है – यूँ कि हमारे मरनेकी जिम्मेदारी भाई साहब मुहम्मद शकूरने ले ली है । मानते है – बड़े शरीफ आदमी है वह !"

■

आने-जाने, घूमने-घामनेकी छुट्टी न मिले तो वह घर कैदखाना नहीं तो और क्या है ?"

गुस्सा तो मालकिनको बहुत आया सिकन्दरकी बातपर लेकिन क्योंकि पच्चीस सालसे सिकन्दरके मुँहसे ऐसे ही फूल झडते थे इसलिए इस विषय-में उनसे कुछ कहना-सुनना बेकार था। कुछ देरकी खामोशीके बाद सिकन्दरने अपनी बात फिर दोहरायी कि उनको दो दिनकी छुट्टी जरूर ही दे दी जाये।

"जाना कहाँ है आखिर ?" पूछा गया।

बोले, "ज़रा सोनके मेले जायेंगे।"

"सोनके मेले ? अरे बेवकूफ वह भी कोई मेला होता है ! अभी अगले महीनेमें नुमाइश लगनेवाली है, वह देखना।"

लेकिन सिकन्दर भला कहाँ माननेवाले थे ! बोले, "छी, यह नुमाइश भी कोई नुमाइश होती है। पच्चीस सालसे देखते चले आ रहे हैं, न कोई नयी बात न कोई पुरानी बात। वही हमेशाके हमेशा एक सी नुमाइश हुए निकले हैं। एक तरफ कबाब पराठेवाले चीखे-चिल्लाये हैं, दूसरी तरफ सरकसके हाथी-घोडे शोर-गुल मचाये हैं — शुरू-आखिरमें देखते आ रहे हैं हम यह नुमाइश — कौडी कामकी नहीं होती है यह नुमाइश।"

मैंने कहा, "सिकन्दर याद रखना, इस बार अगर नुमाइशमें लगातार तुम बदहवास हो-होकर नुमाइश देखने गये तो अच्छा नहीं होगा। नुमाइश-के जमानेमें तो तुम्हारे होश हवास ठीक नहीं रहते हैं — आपेसे गुजर जाते हो, सारे घरका काम चौपट हो जाता है, और आज एक मामूली सी नौटकीवाले मेलेके लिए नुमाइशमें कीडे डाल रहे हो ?"

सिकन्दर हँसकर बोले, "अरे बीबी, सोनके मेलेमें नौटंकी [illegible] नहीं होती है।"

"क्या तुम पहले भी सोनका मेला देख चुके हो ?" मैंने पूछा।

"देखा तो नहीं लेकिन सुन तो रखे हैं कि सोनका मेला एक [illegible]

"तो तुम बेरी हो ?" एक बच्चेने हँसते हुए पूछा।

सिकन्दर नाराज होकर बोले, "देखिए कुछ मियाँ आप [illegible] बच्चे और बच्चे शुरू-आखिरमे ऐसी बातोमे नही बोलते है। बेरीका [illegible] एक पेड होता है, उस पेडमे बेरीका फल लगता है। फिर जब बेरी [illegible] होती है तो कुछ लोग ढेले मार-मारकर बेरी तोडते है – उसी मौकेपर यह कहावत बोली जाती है।" सिकन्दर समझानेके भावमे बोले।

जब सिकन्दरको हर तरहमे मोतके मेलेमे जानेसे रोकनेकी बेकार कोशिश कर ली गयी तो मजबूर होकर उनको दो दिनकी छुट्टी दे दी गयी और वह खुशी-खुशी अपना बिस्तर बाँधकर स्टेशन रवाना हो गये।

वे ठण्डीके दिन थे। जनवरीकी ठण्डी बर्फीली हवाएँ [illegible] रहे थे। रात-भरकी बूँदा-बाँदीके बाद हल्की-सी धूप [illegible] घर-वाले आँगनमे खूब ओढ-पहनकर धूप सेंकने बैठे थे। ग्यारह बजा [illegible] था कि दो दिनके बाद सिकन्दर मियाँ घरमे दाखिल हुए और [illegible] खिलाफ वह जल्दी-जल्दी हम सबसे नजरें बचाते हुए [illegible] बढने लगे। लेकिन बच्चोने उन्हे [illegible] घेर लिया।

"अरे सिकन्दर, तुम्हारा यह क्या हाल है ?" [illegible] पूछा।

सिकन्दरने बोलनेकी कोशिश की मगर उनका गला बैठा हुआ था। मुँह जुकामसे लाल अंगारा हो रहा था। आँखे सूजी हुई [illegible] थी और वह केवल एक कोट पहने सर्दीसे काँप रहे थे और [illegible] किट्-किट् बज रहे थे।

इस हालमे देखकर उनसे किसीने बातचीत न की और [illegible] कोठरीमें जाकर खाटपर लेट रहे। रमाइया, [illegible] बताया कि सिकन्दर मियाँ बुखारमें भुन रहे है और [illegible]

दो दिनोंके बाद सिकन्दर ठीक हो गये। तीसरे दिन [illegible] नाश्तेपर बकौल अपने 'ड्यूटीपर हाजिर थे' तो उनसे [illegible] हालचाल पूछा गया।

कुछ शरमाते हुए बडे कायल लहजेमे बोले, "बीबी, बात यह है कि मथरीने हमसे मेलेकी बडी तारीफ की थी और उस बातका भी अकीन (यकीन) दिलाया था।"

"किस बातका यकीन ?" मैंने पूछा।

मथरीको सामने आते देखकर सिकन्दरने बडी बेजारीसे उसकी तरफ देखा, मगर मथरी भी एक ही ढीठ बुढिया थी – झाडू बगलमे दबाये सिकन्दरके पास आ खडी हुई।

सिकन्दर परे हटते हुए बोला, "इन्होने हमको बताया था कि सोन नदीके किनारे सालमे एक बार मेला लगता है और आस-पासके तमाम गाँववाले बल्कि अच्छे-अच्छे खाते पीते लोग-बाग अपने अपने बाल बच्चोंके साथ मेला देखने आते हैं और बडी रौनक वहाँ लगती है, और कभी-कभी ऐसा भी होता है कि लोग-बाग शादी ब्याओकी बात भी वही निकाल देते है।"

"अच्छा-अच्छा, तो यह शादी-ब्याहका खयाल था – तुम्हारा पुराना मर्ज जो तुम्हे सोनके मेलेमे ले गया! मगर भई, बीबी तो साथ लाये नही, अपनी दरी और कम्बल भी खो आये वहाँ और उल्टा बुखार लेकर आ गये! किसी लडकीवालेसे बातचीत भी हुई कि नही ?"

सिकन्दर बोले, "यही तो बात है सारी! आप पूरा किस्सा तो सुनिए। हुआ यह कि आप तो जाने हैं कि आज तक हमारा घर नही बसा है और हमारी शादी-ब्याओ भी नही हुई है और अब जात बिरादरी-में कुछ ऐसा नाम हमारा निकल गया है और हमारे भाजे भानजे तक भी ब्याह गये है कि कोई आदमी हमको अपनी बेटी देनेको तैयार नही होता है, तो हमने कहा कि चल भई सिकन्दर अब जंगल सहराओं (बयाबानो)मे किस्मत आजमायी करे। और मथरीने हमको बताया कि इन मेले-ठेलोमें हर साल भीड-भडक्केके मौकेपर औरत-बौरत बहुत सी आती हैं और घरवाले उनको सबर करके अपने घरोंको लौट जाते हैं [illegible]

उन बीबीके जानेके बाद सिकन्दर मेरे सामने आकर खड़े हुए और बोले, "लीजिए, और सुनिए! कहे जा रही थी कि बस एक ही बच्चा है। अरे साहब, एक बच्चेने तो आफत मचा रखी है और जो कहीं खुदा न खास्ता दो-एक और होते तो समझिए शामत आ जाती इस घरमें तो! यह तो एक भी भारी है सो बच्चोंपर।"

मैं तो खैर सिकन्दरकी बात-चीतका ढंग जानती थी इसलिए मुझे तो बड़ा मजा आया उनकी इस बातमें, लेकिन बच्चेकी दादी और नानीने उस दिन सिकन्दरको बड़े आड़े हाथों लिया।

सिकन्दरको अपनी जिन्दगीमें सिर्फ एक छोटी सी बातमें कुछ दिल-चस्पी पैदा हुई थी। उसकी भी एक दास्तान है। हमारे [illegible]-से मुलाज़िमोंका एक खानदान रहता है। एक नौकरानी है जिसकी नानी-को मेरी नानीने कहतके जमानेमें खरीदकर पाला था। उसको [illegible] मांने पाला-पोसा और उसकी शादी कर दी, यह शादी ऐसी [illegible] साबित हुई कि औलादका ऐसा सिलसिला बँधा कि हमारे घरमें घरवाले कम और उस नौकरानीका खानदान ज्यादा नजर आने लगा। उसका शौहर बड़ा निकम्मा और कामचोर था। सिकन्दर जिस दिन हमारे यहाँ नौकरी करनेकी नीयतसे आये थे तो उससे बस एक साल पहले ही उस नौकरानीकी शादी हुई थी। सिकन्दरको इस बातका बड़ा कलक था कि वह एक महीना चूक गये वरना सफरी (नौकरानीका नाम) का ब्याह उन्हींसे होता।

इत्तफाककी बात सन् १९४२–'४३ में जब कि लड़ाई ज़ोरोंपर चल रही थी, एक दिन सफरीका कोई ताना सुनकर उसका शौहर [illegible] फौजमें भरती होकर अचानक लामपर चला गया। कुछ दिन तक [illegible] कुछ पता नहीं चला, आखिरमें दो-तीन महीने बाद उसने सफरीको कुछ रकम भेजी खर्चेको। अब सफरी बहुत [illegible] और सिकन्दरको और भी ज्यादा हकीर समझने लगी कि [illegible]

सिकन्दरका

कागजकी पुड़िया थी, उसमें दो लड्डू थे। सामने लड्डूपर नजरें जमाये अफसरी बैठी थी और बार-बार इस तरह जबान होंठोंपर फेर रही थी जैसे भूखी बिल्ली तश्तरीके दूधकी तरफ देखती है।

सिकन्दर बोले, "बेटा, लड्डू खायेगी।"

अफसरीने आगे बढ़कर जोरसे गरदन हिलायी और होंठोंपर जबान फेरी।

सिकन्दर बोले, "हम यह लड्डू तेरे ही लिए लाये हैं, लेकिन ऐसे नहीं देंगे, बस एक बार तू हमको 'अब्बा' कह दे, फिर ये लड्डू तेरे हैं।"

सिर्फ इतनी-सी बात कहनेमें बच्चीका क्या नुकसान था। अगर मिठाई पानेकी यही शर्त थी तो वह सिकन्दरको क्या लड्डू तकको 'अब्बा' कहनेको तैयार थी। उसने आगे बढ़कर पुड़िया सिकन्दरसे छीनते हुए कहा, "अब्बा, लड्डू दे दे।"

सिकन्दर खुशीसे खिल उठे, अपने टेढ़े मेढ़े सारे दाँत बाहर निकाल दिये उन्होंने और लड्डू बच्चीके हवाले कर दिये। बच्ची पुड़िया लेकर उचककर सिकन्दरकी पहुँचसे दूर हो गयी और एक कोनेमें खड़ी होकर जोर-जोरसे कहने लगी, "तू अब्बा नहीं है, तू तो छिकन्दर है, छिकन्दर, छिकन्दर, छिकन्दर!"

सिकन्दर गुस्सेसे बेहाल होकर आगे बढ़े कि मैं अन्दर दाखिल हो गयी। मुझे देखकर वह पानीके बुलबुलेकी तरह एकदम बैठ गये, और हुक्का गुड़गुड़ाने लगे।

■

दोना था जिसमे अफसरीके लिए गरमा-गरम मिठाई थी। सिकन्दर बिला-वजह हँसते हुए एक दरवाजेसे घरमें दाखिल हुए और करना खुदाका क्या हुआ कि उनके बिलकुल सामनेवाले जनाने दरवाजेसे अफसरीका शौहर मुबारक अपनी खाकी वर्दी पहने दाखिल हुआ। सिकन्दरके हाथोंसे मिठाईका दोना छूट पडा। उनका चेहरा फक हो गया और वह हाथ झाडकर इस तरह एक तरफ हक्का-बक्का खडे हो गये जैसे उन्होने किसी भूतको देख लिया हो!

कुछ देर बाद जब सिकन्दरके होश हवास कुछ ठीक होने लगे तो वह भी मुबारककी तरफ बढे। वहाँ अफसरी खडी थी। सिकन्दरने उसीपर कडी नजरें डालते हुए कहा, "चुडैल, क्यो रास्ता घेरे खडी है? चल, दूर हट इधरसे। कायको मिनक रही है?" और मुबारकसे बडे उदास लहजेमें उन्होने सिर्फ इतना कहा, "यहाँ तो खबर आ गयी थी कि कास खुदा न खास्ता आप हो गये 'महरूम' लेकिन, अब हम आपको क्या फरमायें।"

मुबारकको एक महीनेकी छुट्टी मिली थी। वह किसी फौजी रेजीमेंटमें भैरा हो गया था लेकिन लडाई और फौजके बारेमें ऐसी ऐसी बातें बताता था कि सिकन्दर दंग रह जाते थे। एक दिन जब मुबारकने सिकन्दरको यह वाकेया सुनाया कि, "फौजका भी अजब हाल है, सिकन्दर भाई! वहाँ तो हर बात ही का ढंग अलग है। एक ऐसी चीज कहलाती है पैराशूट।"

सिकन्दर टोकते हुए बोले, "ओ-हो, हम जानते हैं उसे — हवाई जहाजसे उतरनेकी छतरी होती है।" मुबारकने बडे गम्भीर लहजेमें कहा, "एक दफा क्या हुआ, सिकन्दर भाई, कि हमारा जहाज सिंगापुरके ऊपर उड रहा था, कुछ खतरा देखकर हमें अफसरने हुक्म दिया कि फौरन अपनी अपनी छतरियाँ खोलो और नीचे कूद पडो। हम सब अपनी अपनी छतरी खोलकर नीचे उतर पडे। सिंगापुर हम बडा मुश्किल [illegible]

किसी बच्चेने बताया कि वह फौजियोंके साथ परेड करते हुए शमशाद बिल्डिंग (यूनिवर्सिटीकी मारकेट)में देखे गये है। उसी शामको सिकन्दर हम लोगोसे मिलने घर आये तो फौजी वर्दी पहने थे। किसी बड़े साइजके फौजीकी वर्दी उन्हे दे दी गयी थी लिहाजा सिकन्दर तो बराय नाम नज़र आ रहे थे हर तरफ वर्दी ही नज़र आती थी।

सिकन्दरने हम लोगोको फौजी सलाम किया और बड़े फख़्रसे इधर-उधर देखने लगे। बावर्ची नज़र आया तो उससे बोले, "जा भई, तू चूल्हा झोंक, यहाँ क्या कर रहा है खड़ा खड़ा ?"

किसीने उनसे पूछा, "क्यो भई सिकन्दर, फौजमे भरती हो गये तुम तो, अब तो खुश हो ?"

सिकन्दर हँसकर बोले, "जी हाँ, हम बहुत खुश है अब तो।"

"कैसी लग रही है तुम्हे फौजकी जिन्दगी ?" मैंने पूछा।

बोले, "और तो सब ठीक है, बीबी, बस जरा जूतेकी मुश्किल है।"

"जूतेकी क्या मुश्किल है, भई ?"

"वाह साहब, बात यह है कि फौजमे हमारे साइज़की कोई चीज ही नही है – वर्दी है तो, जूता है तो, सब या तो हमारे नापसे बड़े है या छोटे। अब देखिए ना –" यह कहते हुए सिकन्दरने उकड़ूँ बैठे बैठे अपने एक पाँवको दोनो हाथोसे सहारा देते हुए आगे बढाया और बोले, "यह जूता है ? इसको जूता कहे हैं ? अरे साहब, खुदा झूठ न बुलाये तो ढाई-ढाई सेरका वज़न है। नीचे यह बडी-बडी कीलें अलग जड़ी है। फिर बड़े सैज (साइज़)का है तो बार-बार हमारा पाँव इसमे से निकलने लगे है। और साहब, हुकुम यह है कि दिन-भर यही वर्दी पहने रहो और साथमे हर दम जूता चढाये रखो, किसी वखत दिल चाहे कि अपना कुर्ता-पाजामा पहनकर, चप्पल पाँवमें डालकर, घूमे तो साहब इसकी भी इजाजत नही है। जमादार साहब बड़े कड़वे मिजाजके है। हर बातपर गाली दे बैठते है। कल हम ज़रा देरको दोपहरमे कमर सीधी करनेको

सिकन्दरनामा

लेट रहे थे तो आव देखा न ताव सीधे आकर एक हण्टर जड दिया उन्होंने। फिर बोले कि 'चल सीधे-सीधे परेड हो रही है।' अब साहब सोकर उठे थे हम, जरा तो वखत देते हमे मुँह-हाथ धोनेका। चार बजे थे, चाय तक तो पीनेको न मिली, फौरन खडा कर दिया ले जाकर लैन-डोरीमे और डांट-डांटकर बोलन लगे 'दार्यां-बार्यां, दार्यां-बार्यां।' अब साहब यह तो हमे मालूम था कि फौजमे टांगोको दार्यां-बार्यां कहते है लेकिन यह याद नही था कि दार्यां कौन-सा पांव है और बार्यां कौन-सा है। अब जाने क्या फेर पड जाता था कि जब जमादार जी कहे बार्यां तो हमारा शायद दार्यां पांव उठ जाता था और जब वह पुकारे दार्यां तो हमारा बार्यां पांव बढ जाता था। मुश्किल यह थी कि हमारे पीछे जो रगरूट था वह हमे देख-देखकर पांव बढाता था और उसकी देखा-देखी उससे पीछेवाला भी ऐसा ही करता था। बस साहब, कवायदमे झगडा पड गया और जमादारजी हमारी जानको आ गये और आगे बढकर उन्होंने हमे अपने बूटसे ठोकर मारी और साहब, बूट भी ऐसा बूट कि पाच सेर वजन उसका। हमने इस मुसीबतसे जान बचानेके लिए जमादार जीसे कहा कि हमे बीचमे खडा करनेकी बजाय सबसे आगे खडा करें तब ही मामला ठीक होगा। वह मान गये और हमे सबसे आगे खडा कर दिया और लगे डांटने-फटकारने 'दार्यां बार्यां! दार्यां, बार्यां।' हम साहब जल्दी-जल्दी पांव आगे-पीछे करने लगे कि उन्होने चीखकर परेड ही रुकवा दी और हमे गाली देने लगे कि पूरी लाइन ही बिगड गयी है अबके तो। तो साहब, "क्या बतायें, यह दायें-बायेंने बडी मुसीबत कर दी है हमारी।"

उस दिन तो सिकन्दर चले गये। तीसरे दिन आये तो बहुत बुझे हुए थे। वर्दी मलगजी हो चुकी थी और सिकन्दरके चेहरेपर ऐसी कम-ज़ोरी थी जैसे किसी बीमारके चेहरेपर होती है। कराहकर नीचे बैठ गये और बोले, "अरे साहब, हम बाज आ गये इस फौजसे। किसी तर

हमारी जान बच जाये इससे, हम तो बडी मुसीबतमे फँस गये ।"

"क्यो भई, क्या हुआ आखिर ?"

सिकन्दर उदासीसे बोले, "एक बात हो तो कहे साहब, वहाँ तो हर बात ही औंधी है । अभी दायाँ-बायाँ ही समझमे नही आया था कि कल नाश्तेपर झगडा हो गया । सुबह-सुबह जो दलिया हमे खानेको मिला वह ऐसा था जैसा यहाँ हमारी भैसको दिया जाता है । जब हमने कहा कि यह गिजा क्या आदमियोंके खानेकी है, तो जमादारजी हमपर बरस पडे कि फौजमे भरती हुआ है कि बादशाही तख्तपर बैठा है ! कल जुमेका दिन था, हमने जमादारजीसे कहा कि आज तो हम नहायेंगे, मस्जिद जायेंगे, नमाज पढने और शामको बरछी बहादुर साहबके मजारपर कव्वाली सुनने जायेंगे तो जमादारजीने एक मोटी-सी गाली हम दी और कहा कि क्या पागलखानेसे निकलकर आया है ? यह फौज है कि राज-महल ! हम परसो शामको यूँ ही जरा बैठे-बैठे अपने साथियोको सदर-गेटवाली लोलाबाईका किस्सा सुना रहे थे कि कैसी आन-बानवाली औरत है वह और कैसे कोकीन बेचनेमे पकडी गयी और कैसे छह महीनेकी जेल काटकर आयी और क्या गला पाया है उन्होंने, कि साहब बस इतनी जरा-सी बातपर जमादारजीने आकर शोर मचा दिया – गालिया दी, एक बेंत भी मारा और बोले, "अब तू यहाँ हमारे फौजियोको बिगाड रहा है । तुझे किसने यहाँ भरती होनेको भेज दिया, तू तो जाकर सीधे सीधे किसी कोठेपर तबला थाप !"

"आज सुबह कहने लगे कि हुकुम आ गया है, तैयार रहो, बस चार-पांच ही दिनमे कूच करना होगा ।"

"हमने पूछा, जमादारजी कहाँ जाना होगा ?"

बस साहब इतनी-सी बातपर बिगड गये, बोले, "तुझे क्या, कहाँ जाना है । अरे, जहाँ भेजना होगा वहाँ भेज दिये जाओगे ।"

"हमने कहा, हम यह कैसे मान ले जमादारजी ? हम भी सदा कोई

मुर्गी हैं कि अण्डे हैं कि जहाँ जी चाहा भेज दिया। जबतक बताओगे नहीं, हम तो खिसकनेके नहीं यहाँसे।"

"लोग-बाग हँसने लगे तो जमादारजीने हमें फिर गालियाँ दीं और बोले "बकवास मत करो। सीधे-सीधे जानेको तैयार हो।"

हम भी अड़ गये साहब, कि ऐसा तो कायदा न सुना न देखा। आदमी, साहब, जाता है, वहाँका कुछ नाम पता होता है, टिकट होता है यह क्या कि बस हुकुम दिया कि चलना है। अरे भई, कहाँ चलना है यह तो बता दो। लेकिन साहब फ़ौजका तो कोई बात ही हमारी समझमें नहीं आयी। जमादारजीको न बताना था न बताया उन्होंने कि कहाँ जाना है। जब हमने उनसे कहा कि हम अपने रिश्तेदारोंको कहाँका पता दें तो उन्होंने कहा कि तुम्हारा नम्बर लिखकर दिया जायेगा उनको, उसीपर खत-किताबत (कितावत) हो सकती है। अब साहब, हम कोई चोर हैं, उचक्के हैं, जूते हैं, मोज़े हैं—जो हमारा भी नम्बर होगा? पर साहब, वह तो अपनी बातपर अड़े हुए हैं।"

इसी तरह सिकन्दर मियाँ दस-पन्द्रह दिन तक हर दूसरे-तीसरे दिन आकर अपना दुखड़ा सुनाते थे। पहले तो हम लोग उनकी दुरगतसे कुछ खुश होते थे लेकिन आख़िरमें जब उनकी हालत सचमुच बहुत तबाह हो गयी तो बड़ी कोशिशों, तरह-तरहकी सिफारिशों और डाक्टरी सार्टिफिकेट दाख़िल करवाकर उनको फौजसे छुटकारा दिलवाया गया।

सिकन्दर फौजके ज़िक्रसे अब बहुत बेज़ार हो चुके हैं और इस तरह हिन्दुस्तानकी फौज इस वतनके सिपाही, यानी सिकन्दर-जैसे सूरमा, की ख़िदमातसे महरूम हो गयी।

■

सिकन्दरकी वापसी

सिकन्दर फौजसे लौटे तो कुछ दिनों तक बहुत दिल लगाकर काम करते रहे। धीरे-धीरे काम काजमें ढील देने लगे और एक दिन किसी कामसे बाज़ार गये तो एक घण्टेके बजाय चार घण्टेमें घर लौटे। घरमें उस दिन कोई दावत वगैरह थी। मेहमान आ चुके थे, मगर सिकन्दरका कोई पता न था और खाने-पीनेकी वे चीज़ें भी गायब थीं जिन्हें लेने सिकन्दर बाज़ार गये थे। घरकी मालकिन दिल ही दिलमें पेचो-ताब खा रही थीं और मेहमानोंको तरह-तरहकी बातोंमें मशगूल रख रही थीं कि खुदा-खुदा करके मियाँ सिकन्दर लदे-फँदे अपनी साइकिलसमेत घरमें दाखिल हुए।

मौका ऐसा था कि उनसे कुछ कहा नहीं जा सकता था, जब मेहमान वगैरह चले गये तो मालकिनने सिकन्दरपर गुस्सा उतारते हुए कहा,

"मैने तय कर लिया है कि आजके वादसे तुमसे वाजारका कोई काम नही लिया जायेगा, तुम निहायत कामचोर आदमी हो और किसी टगके कामकी तुमसे उम्मीद रखना सरासर हिमाकत है। तुम तो बस वारवरदारी (बोझ ढोना) के काबिल हो।"

'वारवरदारी' का लफ्ज सुनकर सिकन्दरका चेहरा गुस्सेमे लाल-पीला हो गया और वह वहुत झुँझलाकर वोले, "लो साहव और सुनो, चौबीस सालसे हम रात-दिन सबकी खिदमत कर रहे है, हर दम, हर घडी इस घरकी 'भलाई' मे लगे रहते है और आप कहती है कि हम 'वरवादी' कर रहे है इस घरकी। यही वात है तो लीजिए अपना घर सँभालिए, हम तो जाते है।"

मालकिन भी उस दिन गुस्सेमें थी इसलिए फौरन ही कह वैठी, "तुम आखिर अपनेको समझते क्या हो? क्या हमारे घरका काम तुम्हारे वगैर चल नही सकता? तुम एक मिनटमें यहाँसे जा सकते हो, और आइन्दा इस घरमे कभी कदम नही रखना।

सिकन्दर भी जानेपर तैयार हो गये। सीधे अपनी कोठरीमें पहुँचे और अपना सामान वगैरह वाँधने लगे और मालीसे उन्होने एक रिक्शा लानेके लिए कहा कि गाडी छूटनेमें सिर्फ एक घण्टा वाकी था। अलीगढमे उस जमानेमें नुमाइश हो रही थी। सिकन्दरको डाँट-फटकारकर सव घर-वाले नुमाइश देखने चले गये। इत्तफाकसे उस दिन वहुत रात गये जव हम लोग घर लौटे तो देखा कि सिकन्दर सहनके वीचोवीच पत्थरको चवूतरेपर वैठे हैं और अपना मफलर सरसे लपेटे हुए सर्दीमे काँप रहे है और उनका सामान उनके पास रखा हुआ है। हम लोगोको देखकर उठ खडे हुए लेकिन तेवर वता रहे थे कि अवतक घरवालोकी तरफसे दिल साफ नही हुआ था।

मालकिनने उनको देखा तो वोली, "क्यो? गये नही तुम अवतक?"

सिकन्दर गुस्सेमें काँपते हुए बोले, "जानेको क्या हुआ? क्या हम जा

नही सक्ते ? क्या हमारा कोई ठिकाना नही है ? क्या रेलगाडियां बन्द हो गयी है जो हम जा नही सकते ?"

किसीने फिर सिकन्दरको छेडा, ' फिर गये क्यो नही आखिर ?"

अब सिकन्दर आपेसे बाहर हो चुके थे। गरजकर बोले, "आप लोगोका क्या है, वक्त देखते है न मौसम, बस सबको तफरीहकी पडी रहती है, सबके सब चल दिये नुमाइश देखने, और जो काम खुदा-न-खास्ता हम भी चले जाते और हमारा घर कोई लूट ले जाता, तो आप लोगोका क्या जाता ?"

यह फिकरे सुनकर हम सबके सर शर्मिन्दगीसे झुक गये और खामोशी-से सब लोग अपने-अपने कमरोमे चले गये। मालकिनकी भौगाम साहू आ गये, उन्होने सिकन्दरको डांटकर कहा, "क्या सर्दीमे खडा-खडा ठिठुर रहा है, बावर्चीखानेमे जाकर कुछ खा-पी और अपनी कोठरीमे जाकर मर! यहां क्यो हमारी सूरतपर सवार है ? बीमार हो जायगा तो तेरा काम कौन करेगा, कामचोर कहीका!"

अभी थोडे दिनोकी बात है सिकन्दरके वतनसे उनके नाम एक खत आया। सिकन्दरको अपनी डाकका बहुत इन्तजार रहता है और हफ्ते-दस दिनमे उनके नाम जरूर एक-न-एक खत उनके घरसे आ जाता है। अजीब बात यह है कि चौबीस सालकी मुद्दतमे उनके नाम जितने खत आये है उन सबका मज़मून तकरीबन यकसां होता है, सिर्फ भेजनेवालेके नाममे कभी-कभी फर्क हो जाता है। हर खतमे सिकन्दरसे कोई न कोई फरमाइश या मुतालबा किया जाता है, किसी-न-किसीको किसी-न किसी-का कर्ज़ा चुकाना होता है। लडकीकी शादीके लिए पैसोकी जरूरत होती है। इलाजके लिए रकम दरकार होती है। घरकी मरम्मतके लिए पचास-साठ रुपयोका सवाल होता है। आज तक इनमें-से कोई सिकन्दरके काम

वह शादी करके और 'उनको' साथ लेकर लौटेंगे।

जब एक हफ्ता गुजर गया और सिकन्दर नही लौटे तो सबको बडी फिक्र हुई कि आखिर हुआ क्या। सिकन्दर तो इस मामलेमें बडी पाबन्दीके कायल थे, छुट्टीसे एक दिन भी ज्यादा वह कभी नही रुकते थे। आठवें दिन सिकन्दरका एक हम-वतन चपरासी आया और उसने एक लिफाफा दिया जो सिकन्दरने उसको दिया था कि घर जाकर मालकिनको दे आये।

खत खोला गया तो उसमे दर्ज था कि, "बेगम साहब, हमको बडा अफसोस है कि हम वखतपर घर नही पहुँच सकेंगे। चूँकि आपकी दुआसे हमारे 'माँ-बापो' ने यहाँ एक जगह हमारे 'रिश्ते' की बातचीत चला रखी है। आज लडकीवालोने हमको अपने घर बुलाया है देखनेको। हम खुद भी चाहते है कि इस दफा यह हमारा शादीका रगडा (झगडा) जरूर खतम हो ले। हम अपने दोस्तके हाथो यह गस्ती (दस्ती) खत भिजवा रहे हैं।"

इस खतके चौथे दिनके बाद सिकन्दर बेहद खुश व खुर्रम घरमे दाखिल हुए। सब घरवालोने उनको घेर लिया, यह सोचकर कि सिकन्दर ब्याह कर आये।

किसीने पूछा, "क्यो सिकन्दर आ गये?"

बोले, "आँ-हाँ, हम आ गये।"

एक बच्चेने आगे बढकर पूछा, "तुम्हारी शादी हो गयी सिकन्दर?"

सिकन्दरने जजबातसे खाली लहजेमें जवाब दिया, "नहीं, शादी तो नही हुई हमारी।"

"अरे-रे-रे, इस बार भी तुम कुँवारेके कुँवारे ही लौट आये। भई, तुमने तो अपने 'गस्ती' खतमे लिखा था कि तुम बरदिखौवा जा रहे हो।"

सिकन्दरने इतमीनानसे पत्थरपर बैठते हुए कहा, "बात जरा लम्बी है, बेगम साहब, फुरसतसे सुनायेंगे हम इस किस्सेको।"

लेकिन ऐसा दिलचस्प किस्सा सुननेके लिए फुरसतका इन्तजार किसे था, सब लोग सिकन्दरसे इसरार करने लगे कि पूरा हाल अभी-अभी सुना दें।

सिकन्दर भी अब किस्सा सुनानेके मूडमे आ चुके थे। कहने लगे, "साहब, हमारे पडोसमे एक मुन्शीजी रहते हैं, उनकी दो बेटियाँ हैं। एक बेटी अपने घरमें खुश है और अपने आदमीके साथ पाकिस्तानमें रहती है। दूसरी बेटी यही हाथरसमे ब्याही थी। उसका घरवाला ठीक आदमी नही था और ससुरालवाले भी अच्छे नही थे, इसलिए वह लडकी अपने मैके आकर रहने लगी थी। और उसने साफ-साफ अपने माँ-बापोसे कह दिया था कि अगर उसको दोबारा उसकी सुसराल भेजा गया तो अपनी जानकी खुमकुसी (खुदकशी) कर लेगी। अब पाँच सालसे वह अपने मैकेमे बैठी थी। उसका आदमी बार-बार उसको लेने आता था लेकिन उसने उसके साथ जानेसे साफ इन्कार कर दिया था। उसके मैकेवालोने सोचा कि कही दूसरा घर उसके लिए देखा जाये, उन्हें अच्छे दामादकी तलाश थी कि हमारा तजकरा छिड गया। हमारे जिक्रपर सुनते हैं वह कुछ कुछ राजी होने लगी थी लेकिन उन्होने यह शर्त रख दी थी कि अबकी दफा वह अन्धे कुँएमे नही गिरेंगी बल्कि दरवाजेकी आडसे खुद भी 'लडके' को देखेंगी। हमे यह रूदगाद (रूदाद) मालूम हुई तो हमने कहा कि हमें 'उनको' यह शर्त भी मजूर है। और उसी दिन शामको हम उनके घर पहुँचे। वहाँ हमारी बडी आवभगत हुई—शरबत पिलाया गया, पान खिलाया गया और उनके चचाने हमसे कहा कि आप खातर-जमा रखें, शायद आपकी क़िस्मत खुलनेवाली है और शायद हम आपको अपनी गुलामी (गुलामी) मे लेनेवाले है। हम यह सुनकर अपने घर चले आये। दूसरे दिन जब सारा दिन गुज़र गया और शाम भी बीतने लगी तो हम 'उनके' घर पहुँचे। वहाँ जाकर पता चला कि कल हमारे आनेके बादसे जो 'उन्होने' रोना शुरू किया तो रात-भर रोती रही और सुबह-सवेरे उठकर

रिक्शा मँगाकर अपने शौहरके घर चली गयी ।"

हम सबका मारे हँसीके बुरा हाल था ।

मैंने कहा, "वाह, सिकन्दर वाह, यह भी खूब हुआ, तुम्हे तो इस किस्सेसे बडा दु ख हुआ होगा।" सिकन्दरने जरा पहलू बदला, कुछ मायूसी सी उनकी आँखोमे झलकी, लेकिन वह बडे ठहरावमे बोले, "दु खकी क्या बात है बीवी, हम तो बहुत खुश है कि हमारी वजहसे किसीका घर तो बस गया ।"

फिर वह आहिस्ता-आहिस्ता चलकर पानीके नलकी तरफ गये और जूते उतारकर उकडूँ बैठकर सर झुकाकर अपने पाँव धोने लगे—जैसे अब उनकी जिन्दगीमे यही एक अहम काम बाकी रह गया हो ।

■

लेखिका

उत्तर प्रदेशके एक कुलीन मुस्लिम घरानेकी पुत्री। बनारसमें जनमी, अलीगढमें शिक्षा पायी। साहित्य-प्रेम अपने पिता श्री रशीद अहमद सिद्दीकीसे प्राप्त हुआ।

चौदह वर्षकी अल्पायुसे लेखनारम्भ, फिर अलीगढ विश्वविद्यालयसे एम० ए० करनेके बाद तीन वर्ष वहीं विमेन्स कॉलिजमें प्राध्यापिका। अब बम्बईमें, साहित्य-सेवा-रत।

सिकन्दरनामा उनके विशिष्ट शैली-शिल्प तथा व्यंग्य साहित्य सृजनका सुन्दर नमूना है।